[2023] 14 एस.सी.आर. 727 : 2023 आई.एन.एस.सी. 978

मामले का विवरण

मंजूनाथ एवं अन्य

बनाम

कर्नाटक राज्य

(आपराधिक अपील संख्या 866/2011)

06 नवम्बर, 2023

[अभय एस. ओका तथा संजय करोल, न्यायमूर्ति]

शीर्ष टिप्पणियाँ

विचारणीय मुद्दा: ऐसे मामले में जिसमें प्रत्यक्षदर्शी एवं परिस्थितिजन्य साक्ष्य के अतिरिक्त मुख्य रूप से मृत्युकालिक कथन सम्मिलित है, विचारण न्यायालय ने अपीलकर्ताओं-अभियुक्तों सहित अन्य अभियुक्तों को दोषमुक्त किया था, क्या उच्च न्यायालय अपीलकर्ताओं के संबंध में उक्त निर्णय को पलटने में न्यायसंगत था।

साक्ष्य - मृत्युकालिक कथन - प्रत्यक्षदर्शी एवं परिस्थितिजन्य साक्ष्य के अतिरिक्त उस पर निर्भरता - वैधता:

अभिनिर्धारित: मृत्युकालिक कथन, यद्यपि निःसंदेह एक महत्वपूर्ण साक्ष्य है जिस पर निर्भर किया जा सकता है, तथापि वर्तमान तथ्यों में यह निष्प्रभावी हो जाता है क्योंकि जिस व्यक्ति ने उक्त कथन को लिपिबद्ध किया, उसका परीक्षण नहीं किया गया, न ही पुलिस अधिकारी (PW19) ने उक्त दस्तावेज़ पर यह विवरण अंकित किया कि कथन किसने लिखा - मृत्युकालिक कथन को लिखने वाले व्यक्ति का परीक्षण आवश्यक है - विशेषतः तब, जब साक्ष्य प्रस्तुत करने के संबंध में कोई स्पष्टीकरण उपलब्ध न हो - मृत्युकालिक कथन की प्रकृति को देखते हुए यह आवश्यक है कि ऐसा कथन किसी प्रकार की सिखावन, प्रेरणा या कल्पना का परिणाम न हो - परंतु डॉक्टर PW1 के कथन से यह स्पष्ट होता है कि जब मृत्युकालिक कथन दर्ज किया गया, उस समय उसके पास अनेक लोग उपस्थित थे - यह भी स्पष्ट नहीं है कि मृतक के किन संबंधियों की उपस्थिति में उक्त कथन दर्ज किया गया - इसके अतिरिक्त अभिलेख पर उपलब्ध परिस्थितिजन्य साक्ष्य भी अभियुक्तों के दोष की परिकल्पना की ओर संकेत नहीं करते - विचारण न्यायालय द्वारा संदर्भित प्रत्यक्षदर्शी साक्षी

PW2, PW3, PW15 में से कोई भी किसी अभियुक्त को विशेष भूमिका आरोपित करने में सफल नहीं हुआ, और न ही अपीलकर्ताओं के संबंध में, जिनकी दोषमुक्ति को उच्च न्यायालय द्वारा पलट दिया गया - विचारण न्यायालय द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण एक संभावित दृष्टिकोण था तथा साक्ष्य के मूल्यांकन एवं विधि के अनुप्रयोग में कोई त्रुटि नहीं थी; अतः उच्च न्यायालय को बिना ठोस कारण दिए ऐसे निष्कर्षों में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए था - आपत्तित निर्णय निरस्त किया जाता है - दोषमुक्ति पुनर्स्थापित की जाती है - तथापि, चूँकि उच्च न्यायालय द्वारा धारा 304 भाग II के अंतर्गत 4 वर्ष का दंड निर्धारित किया गया था और आत्मसमर्पण से छूट का आवेदन इस न्यायालय द्वारा वर्ष 2010 में अस्वीकार कर दिया गया था, अतः प्रतीत होता है कि अपीलकर्ता उक्त दंड की अवधि पहले ही भुगत चुके हैं - आपत्तित निर्णय के परिणामस्वरूप प्रत्येक अभियुक्त द्वारा देय जुर्माना वापस किया जाए - जमानत बंधपत्र समाप्त किए जाते हैं - भारतीय दंड संहिता, 1860 - धाराएँ 143, 144, 146, 147, 148, 304 भाग II, 324, 326, 447, 504 एवं 506 सहपठित धारा 149। [पैरा 11.10, 20, 29.1-29.3, 30, 31]

साक्ष्य - प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य:

अभिनिर्धारित: प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य अन्य प्रकार के साक्ष्यों की अपेक्षा अधिक प्रभावी माना जाता है और इसे सुदृढ़ प्रकृति का साक्ष्य समझा जाता है - सिद्धांत यह है कि यदि प्रत्यक्षदर्शी की गवाही "पूर्णतः विश्वसनीय" हो, तो न्यायालय उसी के आधार पर दोषसिद्धि कर सकता है - यह सिद्धांत उन मामलों में भी लागू होता है जहाँ केवल एक ही प्रत्यक्षदर्शी हो - वर्तमान मामले में अभियोजन साक्षियों की गवाही अविश्वसनीय तथा अविश्वास योग्य पाई गई है - गवाहियों में महत्वपूर्ण तथ्यों, जैसे व्यक्तियों की संख्या, अभियुक्त किस प्रकार वहाँ पहुँचा, उसे कब देखा गया आदि के संबंध में भिन्नता पाई गई है - इन साक्षियों में से कोई भी, चाहे वे प्रत्यक्षदर्शी हों, अभियुक्तों के दोष को संदेह से परे सिद्ध करने में सफल नहीं हुआ - अवैध जमावड़े में सम्मिलित व्यक्तियों की संख्या के संबंध में गवाहियों में विरोधाभास है - किसी गवाही को पृथक रूप से महत्व नहीं दिया जा सकता - प्रत्यक्षदर्शी पर विश्वास करने के लिए उसकी गवाही उत्कृष्ट स्तर की होनी चाहिए - वह प्रथम दृष्टया स्वीकार्य होनी चाहिए - अभिलेख से अनेक विरोधाभास एवं असंगतियाँ प्रकट हुई हैं, जिससे अभियोजन साक्षी अविश्वसनीय एवं अविश्वास योग्य हो जाते हैं, और उनके आधार पर अभियुक्तों को दोषी ठहराना संभव नहीं है। [अनुच्छेद 12, 21.8, 21.12, 22]

साक्ष्य - मृत्युकालिक कथन - इसके संबंध में सिद्धांत - विवेचित।

साक्ष्य अधिनियम, 1872 - धारा 27:

अभिनिर्धारित: धारा 27 की आवश्यकताओं को पूरा करने वाली खोज वह तथ्य होना चाहिए जो अभिरक्षा में रहे व्यक्ति से प्राप्त सूचना के परिणामस्वरूप खोजा गया हो - वर्तमान मामले में विचारण न्यायालय ने यह माना कि जो खोजें की गईं वे या तो सार्वजनिक स्थान से थीं या ऐसे स्थान से जहाँ अन्य व्यक्ति भी निवास करते थे, अतः उन पर निर्भर नहीं किया जा सकता - विचारण न्यायालय का यह दृष्टिकोण सही है। [अनुच्छेद 26, 27]

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 - धारा 378:

अभिनिर्धारित: वर्तमान मामले में उच्च न्यायालय ने आरोपों की गंभीरता का पूर्णतः समुचित मूल्यांकन नहीं किया - अपीलीय न्यायालय को दोषमुक्ति के निर्णय को पलटते समय सावधानी बरतनी चाहिए - दोषमुक्ति केवल अत्यंत ठोस कारणों की उपस्थिति में ही पलटी जानी चाहिए - यदि विचारण न्यायालय दोषमुक्ति का निर्णय देता है तो अभियुक्त के पक्ष में निर्दोषता का अनुमान और सुदृढ़ हो जाता है। [अनुच्छेद 32]

उद्धरणों एवं अन्य संदर्भों की सूची

लक्ष्मण बनाम महाराष्ट्र राज्य (2002) 6 एससीसी 710 - अनुसरण किया गया।

शरद बिर्धिचंद सरडा बनाम महाराष्ट्र राज्य (1984) 4 एससीसी 116: [1985] 1 एससीआर 88 - पर निर्भर किया गया।

खुशल राव बनाम बॉम्बे राज्य एआइआर 1958 एससी 22: [1958] 1 एससीआर 552; *सुरेश चन्द्र जना बनाम पश्चिम बंगाल राज्य* (2017) 16 एससीसी 466: [2017] 13 एससीआर 1; *जयम्मा बनाम कर्नाटक राज्य* (2021) 6 एससीसी 213; *मदन बनाम महाराष्ट्र राज्य* (2019) 13 एससीसी 464: [2018] 4 एससीआर 1003; *राम बिहारी यादव बनाम बिहार राज्य* (1998) 4 एससीसी 517: [1998] 2 एससीआर 1097; *पन्नीरसेल्वम बनाम तमिलनाडु राज्य* (2008) 17 एससीसी 190: [2008] 8 एससीआर 962; *पनीबेन बनाम गुजरात राज्य* (1992) 2 एससीसी 474: [1992] 2 एससीआर 197; *के. रामचन्द्र रेड्डी बनाम लोक अभियोजक* (1976) 3 एससीसी 618: [1976] पूरक एससीआर 542; *शमा बनाम हरियाणा राज्य* (2017) 11 एससीसी 535: [2016] 11 एससीआर 857; *उत्तम बनाम महाराष्ट्र राज्य* (2022) 8 एससीसी 576; *शेर सिंह एवं अन्य बनाम पंजाब राज्य* (2008) 4 एससीसी 265: [2008] 2 एससीआर 959; *सुरेन्द्र बंगाली @ सुरेन्द्र सिंह रूटेले बनाम झारखण्ड राज्य*, आपराधिक अपील संख्या 1078/2010; *अमोल सिंह बनाम मध्य प्रदेश*

राज्य (2008) 5 एससीसी 468: [2008] 8 एससीआर 956; *लखन बनाम मध्य प्रदेश राज्य* (2010) 8 एससीसी 514: [2010] 9 एससीआर 705; *जगबीर सिंह बनाम राज्य* (एनसीटी दिल्ली) (2019) 8 एससीसी 779: [2019] 11 एससीआर 1137; *राजाराम बनाम मध्य प्रदेश राज्य* 2022 एससीसी ऑनलाइन एससी 1733; *सूरजदेव ओझा बनाम बिहार राज्य* 1980 पूरक एससीसी 769; *महाराष्ट्र राज्य बनाम कृष्णमूर्ति लक्ष्मीपति नायडू* 1980 पूरक एससीसी 455; *गोविन्द नारायण बनाम राजस्थान राज्य* 1993 पूरक (3) एससीसी 343; *कंस राज बनाम पंजाब राज्य* (2000) 5 एससीसी 207: [2000] 3 एससीआर 662; *सुधाकर बनाम महाराष्ट्र राज्य* (2000) 6 एससीसी 671: [2000] 1 पूरक एससीआर 507; *इरफान @ नाका बनाम उत्तर प्रदेश राज्य* 2023 एससीसी ऑनलाइन एससी 1060; *अनिल फुकन बनाम असम राज्य* (1993) 3 एससीसी 282: [1993] 2 एससीआर 389; *कमल बनाम राज्य* (एनसीटी दिल्ली) 2023 एससीसी ऑनलाइन एससी 933; *गार्गी बनाम हरियाणा राज्य* (2019) 9 एससीसी 738: [2019] 13 एससीआर 1; *इन्द्रजीत दास बनाम त्रिपुरा राज्य* 2023 एससीसी ऑनलाइन एससी 201; *प्रकाश निषाद बनाम महाराष्ट्र राज्य* 2023 एससीसी ऑनलाइन एससी 666; *राय संदीप @ दीपु उर्फ दीपु बनाम राज्य* (एनसीटी दिल्ली) (2012) 8 एससीसी 21: [2012] 6 एससीआर 1153; *गणेशन बनाम राज्य* (2020) 10 एससीसी 573: [2020] 8 एससीआर 768; *नरेश @ नेहरू बनाम हरियाणा राज्य*, आपराधिक अपील संख्या 1786/2023; *मो. इनायतुल्लाह बनाम महाराष्ट्र राज्य* (1976) 1 एससीसी 828: [1976] 1 एससीआर 715; *जैकाम खान बनाम उत्तर प्रदेश राज्य* (2021) 13 एससीसी 716; *निखिल चन्द्र मोंडल बनाम पश्चिम बंगाल राज्य* (2023) 6 एससीसी 605; *तुलसीराम कानू बनाम राज्य* एआइआर 1954 एससी 1; *घुरे लाल बनाम उत्तर प्रदेश राज्य* (2008) 10 एससीसी 450: [2008] 11 एससीआर 499 - संदर्भित।

पाकला नारायण स्वामी बनाम सम्राट एआइआर 1939 PC 47; *पुलुकुरी कोटैया बनाम किंग एम्परर* 1946 एससीसी ऑनलाइन PC 47; *शेओ स्वरूप बनाम किंग एम्परर* एआइआर 1934 PC 227(2) - संदर्भित।

अन्य वाद विवरण, जिसमें आपत्तित आदेश एवं अधिवक्तागण सम्मिलित हैं

आपराधिक अपीलीय अधिकारिता : आपराधिक अपील संख्या 866/2011।

कर्नाटक उच्च न्यायालय, बंगलुरु द्वारा CRLA संख्या 1795/2004 में दिनांक 21.09.2010 को पारित निर्णय एवं आदेश से।

अधिवक्तागण:

अमित सिबल, वरिष्ठ अधिवक्ता, सुश्री बीना माधवन, एस. उदया कुमार सागर, लक्षय सैनी, नारायण कुमार रेलंगी, दर्पण सचदेवा, विनय त्रिपाठी, विनम्र कोपरिहा, अंशुल एल., मनोज एस.एन., एम/एस लॉयर्स एस निट एंड कंपनी, अधिवक्तागण, अपीलकर्ताओं की ओर से।

वी. एन. रघुपति, मनेन्द्र पाल गुप्ता, अधिवक्तागण, प्रत्युत्तरदाता की ओर से।

सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय/आदेश

निर्णय

संजय करोल, न्यायमूर्ति

1. अपीलकर्ताओं[1] (संख्या में छह) ने यह अपील कर्नाटक उच्च न्यायालय, बंगलुरु द्वारा आपराधिक अपील संख्या 1795/2004 में दिनांक 21 सितम्बर 2010 को पारित निर्णय एवं आदेश के विरुद्ध दायर की है, जिसके द्वारा राज्य द्वारा सभी 29 अभियुक्तों के पक्ष में दिए गए दोषमुक्ति के निर्णय के विरुद्ध दायर अपील को, जो कि अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश-पीठासीन अधिकारी, फास्ट ट्रैक न्यायालय-II, कोलार द्वारा सत्र वाद संख्या 162/1999 में दिनांक 25 सितम्बर 2004 को पारित निर्णय एवं आदेश के माध्यम से दिया गया था, आंशिक रूप से स्वीकृत किया गया। उक्त निर्णय को A-1 से A-5 एवं A-7 के संबंध में पलटते हुए, न्यायालय ने उन्हें भारतीय दंड संहिता, 1860 की धाराओं 143, 144, 146, 147, 148, 447, 324, 326, 504 एवं 506 सहपठित धारा 149 के अंतर्गत दंडनीय अपराध करने का दोषी ठहराते हुए प्रत्येक को 4 वर्ष के कठोर कारावास तथा ₹ 5000 के जुर्माने से दंडित किया।

तथ्यात्मक परिप्रेक्ष्य

2. अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा वर्णित तथ्य, अनावश्यक विवरणों को हटाकर, इस प्रकार हैं :-

1. मंजूनाथ (पुत्र बाचन्ना) A-1; रामेगौड़ा (पुत्र बाचन्ना) A-2; रामप्पा (पुत्र नारायणप्पा) A-3; रमेश (पुत्र चिक्का वेंकटरायप्पा) A-4; मंजूनाथ (पुत्र रामप्पा) A-5; द्यावप्पा (पुत्र नारायणप्पा) A-7।
2. आगे इसे मृतक कहा जाएगा।

2.1 6 अगस्त 1997 को मृतक बायरेगौड़ा[2] तथा उसके भाई, टी.वी. नारायणस्वामी (PW4), टी.वी. गोपालरेड्डी (PW5), टी.वी. राजन्ना (PW10) एवं मरप्पा (PW2) खेतों में काम करने गए थे, तभी कथित रूप से सभी अभियुक्त डंडों, लोहे की सरियों तथा धारदार हथियार (चॉपर) से लैस होकर आए और उन्हें धमकाया। PW2, PW4, PW5 एवं PW10 किसी प्रकार भागने में सफल रहे, परंतु जब मृतक भागने का प्रयास कर रहा था, तब A1, A2 एवं A3 ने लोहे की सरिया एवं स्टील धारदार हथियार (चॉपर) से उस पर गंभीर प्रहार किया। मृतक को तत्काल सिडलघट्टा जनरल अस्पताल में डॉ. लोगनायकी (PW1) द्वारा चिकित्सीय उपचार प्रदान किया गया, जिन्होंने पुलिस को भी सूचित किया। वी.एम. सोनप्पा (PW19), जो उस समय उप-निरीक्षक पुलिस थे, ने उसका बयान (Ex. P1) दर्ज किया और उसके परिणामस्वरूप दिनांक 08.08.1997 को अपराध संख्या 249/1997 के रूप में विभिन्न दंडनीय धाराओं के अंतर्गत प्राथमिकी दर्ज की।

2.2 विधिवत जांच के पश्चात चालान प्रस्तुत किया गया और मामला अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश-पीठासीन अधिकारी, फास्ट ट्रैक न्यायालय-II, कोलार के न्यायालय को सुपुर्द किया गया। सभी अभियुक्तों ने भारतीय दंड संहिता की धारा 120B, 143, 447, 302 सहपठित धारा 149 के अंतर्गत लगाए गए आरोपों से इंकार किया और विचारण की मांग की। अभियुक्त संख्या 6 एवं 8 के निधन हो जाने के कारण उनके विरुद्ध कार्यवाही इस चरण पर समाप्त (अभिसमाप्त) हो गई।

विचारण न्यायालय के निष्कर्ष

3. अभियोजन ने लगाए गए आरोपों को सिद्ध करने हेतु 28 साक्षियों का परीक्षण किया; 24 दस्तावेज़ों को प्रदर्शित किया तथा तीन भौतिक वस्तुएँ प्रस्तुत कीं। अभियुक्तों ने कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया, सिवाय इसके कि PW4, गोपाल रेड्डी (PW5), चंद्रप्पा (PW15), टी.वी. कृष्णप्पा (PW17) तथा टी.एस. रामकृष्ण (PW13) के कथनों का खंडन करने के लिए पाँच साक्षियों को प्रस्तुत किया।

4. प्रस्तुत साक्ष्य को पाँच श्रेणियों में विभाजित किया गया - (क) प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य; (ख) मृत्युकालिक कथन; (ग) परिस्थितिजन्य साक्ष्य; (घ) दोषसिद्धि से संबंधित सामग्री की बरामदगी; तथा (ङ) उद्देश्य।

4.1 PW2, PW3 एवं PW15 प्रत्यक्षदर्शी साक्षी हैं और PW2 तथा PW15 ने अभियोजन के मामले का समर्थन नहीं किया। PW2 ने कथन किया कि उसने मृतक के परिजनों से सुना कि उसे विभिन्न चोटें आई थीं और वहाँ पहुँचने पर उसने उसे अपने खेतों से कुछ दूरी पर पड़ा हुआ पाया तथा बाद में ज्ञात हुआ कि उसकी मृत्यु हो गई थी। PW3 ने कथन किया कि उसने अभियुक्तों को मृतक पर आक्रमण करते हुए देखा था और वही लोग थे जिन्होंने उक्त आक्रमण के पश्चात मृतक को PW11 के खेत में नीलगिरी के पत्तों पर लिटाया। PW15 ने कहा कि उसने मृतक को नीलगिरी के बागान के दक्षिणी भाग में पड़ा हुआ देखा, जहाँ PW2, PW4 एवं PW5 भी उपस्थित थे। PW15 ने यह भी कथन किया कि उसने अभियुक्तों को हथियारों से लैस होकर बगीचे की ओर जाते हुए देखा। वह उनके पीछे गया और पाया कि अभियुक्तों ने मृतक का पीछा कर उस पर आक्रमण किया। यह विवाद का विषय है कि क्या अभियुक्तों ने, जैसा कि PW3 के कथन के अनुसार, मृतक को PW11-राघव के नीलगिरी के खेत में लिटाया था या यह कार्य PW15 ने किया था। इस संबंध में अन्य किसी साक्षी ने कोई कथन नहीं किया।

अतः विचारण न्यायालय ने प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य पर विश्वास नहीं किया।

4.2 मृत्युकालिक कथन के संबंध में यह पाया गया कि साक्ष्य से स्पष्ट होता है कि PW19 ने उक्त कथन दर्ज नहीं किया था। इस साक्षी के प्रतिपरीक्षण से यह सामने आया कि उसके स्टाफ के एक सदस्य, अर्थात नटराज ने यह कथन दर्ज किया था, जिसे न तो साक्षी के रूप में उद्धृत किया गया और न ही उसका परीक्षण किया गया। इसके अतिरिक्त, इस साक्षी ने उक्त कथन का अनुमोदन भी नहीं किया।

4.3 प्रस्तुत चिकित्सीय साक्ष्य के संबंध में यह पाया गया कि PW1 ने यह स्वीकार किया कि चोटों का विवरण किसने दिया, इसका उल्लेख नहीं किया गया—क्या स्वयं घायल ने या उसे अस्पताल लाने वाले किसी अन्य व्यक्ति ने। PW1 के इस पूर्व कथन के साथ कि घायल/मृतक के पास अनेक लोग उपस्थित थे, इसे पढ़ने पर विचारण न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि गंभीर सिर की चोट के कारण वह कथन देने की स्थिति में नहीं था और वहाँ उपस्थित अन्य व्यक्तियों ने आवश्यक विवरण प्रदान किया, जिसके आधार पर उक्त विवरण तैयार किया गया।

4.4 परिस्थितिजन्य साक्ष्य के संबंध में यह पाया गया कि PW2 ने 6 अगस्त 1997 की सुबह खेतों की ओर आते हुए भीड़ के संबंध में किसी भी अभियुक्त को इंगित नहीं किया। PW15 ने, जैसा कि ऊपर उल्लेखित है, यह कथन किया कि मृतक को घायल अवस्था में नीलगिरी के पत्तों पर लिटाया गया था। तथापि यह उसका कथन नहीं था

कि मृतक ने उसे यह बताया हो कि उसे चोट किसने पहुँचाई। इससे विचारण न्यायालय ने PW4, PW5, PW6 एवं PW7 के साक्ष्य में “असत्यता” पाई, जिन्होंने यह कहा था कि मृतक ने बताया था कि अभियुक्तों ने उस पर आक्रमण किया।

4.4.1 PW3 एवं PW13 के संबंध में यह पाया गया कि उनका आचरण “सामान्य विवेकशील व्यक्ति” के अनुरूप नहीं था, क्योंकि पहले ने न तो गाँव की ओर दौड़कर सहायता माँगी और न ही मृतक की सहायता हेतु गया, बल्कि कथित रूप से गाँव वालों को किसी छिपने के स्थान पर बुलाने गया; तथा दूसरे ने यह दावा किया कि उसने अभियुक्तों को मृतक एवं उसके भाइयों की हत्या करने की साजिश करते हुए सुना और आगे यह भी कहा कि बाद में उसने सुना कि उनमें से एक पकड़ा गया जबकि अन्य भाग गए। इसके बावजूद वह विजयपुरा में किसी के विवाह में सम्मिलित होने के लिए चला गया। न्यायालय ने इसे ऐसे व्यक्ति के आचरण के विरुद्ध पाया, जो किसी व्यक्ति की हत्या की साजिश सुनने के बावजूद सामान्य रूप से व्यवहार करता रहे।

4.4.2 उपरोक्त निष्कर्षों के आलोक में विचारण न्यायालय ने यह माना कि परिस्थितियों की शृंखला अभियुक्तों के दोष की ओर “निष्कपट, सुसंगत एवं सकारात्मक रूप से” संकेत करने में असमर्थ है।

4.5 हथियारों की बरामदगी के संबंध में, न्यायालय ने यह अवलोकित किया कि यद्यपि हथियार अभियुक्तगण के कथन पर बरामद किए गए थे – लाठियाँ A10, A3, A5, A6 तथा A7 के कथन पर; लोहे की छड़ A1 तथा A2 के कथन पर तथा चॉपर A4 के कथन पर, किन्तु इस आधार पर बरामदगी की सत्यता पर संदेह व्यक्त किया कि लाठियाँ ऐसे स्थान से बरामद की गई थीं जहाँ सबकी सामान्य पहुँच थी तथा चॉपर एवं लोहे की छड़ें ऐसे स्थानों से बरामद की गई थीं जहाँ अन्य व्यक्ति भी निवास करते थे। आगे, यह अवलोकित किया गया कि जब्त की गई लाठियाँ (एम.ओ. 3) 4 फीट लंबी तथा 3 इंच व्यास की थीं, जिनसे खरोंच, नील तथा चीरित घाव जैसी चोटें हो सकती थीं। तथापि, PW1 के चिकित्सीय साक्ष्य में ऐसी किसी चोट का उल्लेख नहीं था। अतः न्यायालय ने निष्कर्ष निकाला कि अभियुक्तगण के विरुद्ध मामले में अपराधसूचक वस्तुएँ अथवा हथियार किसी प्रकार सहायक नहीं थे।

4.6 उद्देश्य के संबंध में, यह अवलोकित किया गया कि यद्यपि 4 अगस्त, 1997 की रात्रि में मार्ग के अवरोध को लेकर PW4 तथा A1, A2, A4, A7, A8, A9, A11 एवं A12 के बीच विवाद हुआ था, जिसके परिणामस्वरूप संबंधित व्यक्तियों के विरुद्ध

आपराधिक अभियोजन प्रारंभ हुआ, किन्तु उसका परिणाम केवल उनके दोषमुक्ति के रूप में हुआ। अतः न्यायालय के मतानुसार उद्देश्य का अभाव था।

4.7 अभियोजन की ओर से दो अन्य पहलू भी प्रस्तुत किए गए, एक; अपराध के घटित होने के स्थान के संबंध में और दूसरा; प्रत्यक्षदर्शी तथा परिस्थितिजन्य साक्षियों के बयान दर्ज करने में विलंब के संबंध में। इन दोनों आधारों पर भी न्यायालय को ऐसा कुछ नहीं मिला जो अभियुक्तगण के दोष की ओर संकेत करता हो।

4.8 ऐसे निष्कर्षों के दृष्टिगत, न्यायालय ने समस्त अभियुक्तगण को दोषमुक्त कर दिया।

5. राज्य ने, सामूहिक रूप से की गई दोषमुक्ति से व्यथित होकर, उच्च न्यायालय के समक्ष अपील की।

<u>उच्च न्यायालय के निष्कर्ष</u>

6. यह उल्लेख किया गया कि मृतक ने कुछ अभियुक्तों का विशिष्ट रूप से नाम लिया था तथा उन्हें विशिष्ट भूमिकाएँ भी आरोपित की थीं। अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्यों तथा अभियुक्तगण के विद्वान अधिवक्ता के निवेदनों का, जिन्होंने यह कहा कि चिकित्सक ने मृतक को बयान देने के लिए उपयुक्त प्रमाणित नहीं किया था और ऐसी उपयुक्तता के प्रमाणपत्र के अभाव में उसके मृत्युपूर्व कथन पर विश्वास नहीं किया जा सकता; तथा राज्य की ओर से विद्वान अधिवक्ता के इस निवेदन का कि मृत्युपूर्व कथन स्पष्ट रूप से A1 से A7 को अभियुक्त ठहराता है, सम्यक् मूल्यांकन करने के उपरांत।

7. न्यायालय ने पाया :-

7.1 मृत्युपूर्व कथन A1 से A7 के विरुद्ध स्पष्ट रूप से मामला स्थापित करता है;

7.2 मृतक द्वारा धारित चोटें PW19 (एस. नारायणस्वामी) को घटना के वर्णन के अनुरूप थीं तथा PW1 (डॉ. लोगनायगी) ने मृतक को बयान देने के लिए उपयुक्त स्थिति में होना प्रमाणित किया था।

7.3 मृतक का मृत्युपूर्व कथन PW3, PW4, PW5 तथा अन्य साक्षियों द्वारा पुष्ट हुआ।

7.4 अभियुक्तगण के विद्वान अधिवक्ता के इस निवेदन पर कि मृतक को पहुँचाई गई चोटें शरीर के गैर-जीवनोपयोगी अंगों पर थीं, इसलिए अभियुक्तगण की ओर से किसी आशय का अनुमान नहीं लगाया जा सकता; न्यायालय ने अपने विवेक से उपर्युक्त

निर्दिष्ट अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 304 भाग-II के अधीन दोषसिद्ध करते हुए चार वर्ष के कठोर कारावास तथा प्रत्येक को 5000/- रुपये अर्थदंड से दंडित किया। अन्य सभी अभियुक्तगण को दोषमुक्त कर दिया गया।

8. अभियुक्तगण की वर्तमान स्थिति निम्नवत् सारणीबद्ध रूप में दर्शाई जाती है :-

क्रम सं.	अभियुक्त का नाम	विचारण न्यायालय द्वारा दंडित	उच्च न्यायालय द्वारा दंडित	अधिरोपित दंड
1.	मंजुनाथ पिता - बचन्ना	दोषमुक्त	आई.पी.सी. की धारा 304 भाग-II के अधीन दोषसिद्ध	4 वर्ष का कठोर कारावास एवं 5000/- रुपये अर्थदंड
2.	रामेगौड़ा पिता - बचन्ना	दोषमुक्त	आई.पी.सी. की धारा 304 भाग-II के अधीन दोषसिद्ध	4 वर्ष का कठोर कारावास एवं 5000/- रुपये अर्थदंड
3.	रामप्पा पिता - नारायणप्पा	दोषमुक्त	आई.पी.सी. की धारा 304 भाग-II के अधीन दोषसिद्ध	4 वर्ष का कठोर कारावास एवं 5000/- रुपये अर्थदंड
4.	रमेश पिता - चिक्का वेंकटरायप्पा	दोषमुक्त	आई.पी.सी. की धारा 304 भाग-II के अधीन दोषसिद्ध	4 वर्ष का कठोर कारावास एवं 5000/- रुपये अर्थदंड
5.	मंजुनाथ पिता - रामप्पा	दोषमुक्त	आई.पी.सी. की धारा 304 भाग-II के अधीन दोषसिद्ध	4 वर्ष का कठोर कारावास एवं 5000/- रुपये अर्थदंड
6.	रामंजनप्पा पिता- मुनिस्वामप्पा (मृत)	मृत	-	
7.	द्यावप्पा पिता- नारायणप्पा	दोषमुक्त	आई.पी.सी. की धारा 304 भाग-II के अधीन दोषसिद्ध	4 वर्ष का कठोर कारावास एवं 5000/- रुपये अर्थदंड
8.	द्यावप्पा पिता- चिक्का मुनिस्वामप्पा (उपशमित)	अभिसमाप्त	-	
9.	वेनुगोपाल पिता- पिल्लप्पा	दोषमुक्त	दोषमुक्त	
10.	चौडा रेड्डी पिता- नारायणप्पा	दोषमुक्त	दोषमुक्त	

11.	जयचंद्र पिता- बचप्पा	दोषमुक्त	दोषमुक्त	
12.	नारायण स्वामी @ भीमा पिता- मुनेगौड़ा	दोषमुक्त	दोषमुक्त	
13.	बाचेगौड़ा पिता- पिल्लप्पा	दोषमुक्त	दोषमुक्त	
14.	नारायण स्वामी पिता- पिल्लप्पा	दोषमुक्त	दोषमुक्त	
15.	कृष्णप्पा पिता- गुट्टप्पा	दोषमुक्त	दोषमुक्त	
16.	मुने गौड़ा पिता- वेंकटरायप्पा	दोषमुक्त	दोषमुक्त	
17.	अश्वथ पिता- गटेप्पा	दोषमुक्त	दोषमुक्त	
18.	अश्वथप्पा पिता- नंजेगौड़ा	दोषमुक्त	दोषमुक्त	
19.	मूर्ति पिता- वेंकटप्पा	दोषमुक्त	दोषमुक्त	
20.	रमेश पिता- मुने गौड़ा	दोषमुक्त	दोषमुक्त	
21.	रमेश पिता- बयम्मा	दोषमुक्त	दोषमुक्त	
22.	नागराज पिता- नारायणप्पा	दोषमुक्त	दोषमुक्त	
23.	दयप्पा पिता- पिल्लप्पा	दोषमुक्त	दोषमुक्त	
24.	नारायणस्वामी पिता- बच्चप्पा	दोषमुक्त	दोषमुक्त	
25.	रामप्पा पिता- चेन्नरायप्पा	दोषमुक्त	दोषमुक्त	
26.	मंजुनाथ पिता- नारायणप्पा	दोषमुक्त	दोषमुक्त	
27.	सोनने गौड़ा पिता- चेन्नरायप्पा	दोषमुक्त	दोषमुक्त	
28.	महेश पिता- जयचंद्र	दोषमुक्त	दोषमुक्त	
29.	लोकेश पिता- बच्चन्ना	दोषमुक्त	दोषमुक्त	

9. आगे बढ़ते हुए, हम देखते हैं कि यह मुख्यतः एक ऐसा मामला है, जिसमें अभियुक्त द्वारा किया गया मृत्युकालीन कथन, प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य तथा परिस्थितिजन्य साक्ष्य सम्मिलित हैं।

10. वास्तव में, मृत्युकालीन कथन (प्रदर्श P1), जिसे पीडब्ल्यू-19 द्वारा सिद्ध किया गया है, अभियोजन पक्ष के मामले का मुख्य आधार है। इस प्रकार के मामले का निर्णय करते समय न्यायालयों द्वारा अनुसरण किए जाने वाले सिद्धांतों का अवलोकन करना लाभप्रद होगा।

<u>मृत्युकालीन कथनों के संबंध में सिद्धांत</u>

11. भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872[3] की धारा 32 प्रासंगिक तथ्य से संबंधित ऐसे कथनों से संबंधित है, जो किसी मृत व्यक्ति द्वारा या ऐसे व्यक्ति द्वारा किए गए हों जिसे खोजा नहीं जा सकता, अर्थात् अन्य शब्दों में, मृत्युकालीन कथन। मृत्युकालीन कथनों के संबंध में इस न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णयों में प्रतिपादित विभिन्न सिद्धांतों का सार निम्नलिखित रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है :-

11.1 मूल आधार यह है कि “nemo moriturus praesumitur mentire” अर्थात् कोई व्यक्ति अपने सृजनकर्ता के समक्ष अपने मुख में असत्य लेकर नहीं जाता।

11.1.1 **लक्ष्मण बनाम महाराष्ट्र राज्य**[4] के मामले में इस न्यायालय की संविधान पीठ ने यह अवलोकन किया: -

“जब कोई व्यक्ति मृत्यु के निकट होता है और जब इस संसार की प्रत्येक आशा समाप्त हो जाती है, जब असत्य कहने का प्रत्येक कारण शांत हो जाता है, और व्यक्ति केवल सत्य कहने के लिए अत्यंत प्रबल विचार से प्रेरित होता है। वह स्थिति, जिसमें कोई व्यक्ति मृत्युशैया पर होता है, इतनी गंभीर और शांत होती है कि विधि में उसके कथन की सत्यता को स्वीकार करने का यही आधार है।”

11.2 किसी कथन को “मृत्युकालीन कथन” कहा जाने तथा इस प्रकार भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 32 के अंतर्गत ग्राह्य होने के लिए, उसमें वर्णित/प्रकट की गई परिस्थितियों का “वास्तविक घटना से कुछ निकट संबंध होना चाहिए।”

11.3 प्रिवी काउंसिल ने **पकाला नारायण स्वामी बनाम सम्राट**[5] में “लेन-देन की परिस्थितियाँ” वाक्यांश की व्याख्या निम्नलिखित प्रकार से की:-

---

3 संक्षेप में, “आई.ई.ए.”

4 (2002) 6 एस.सी.सी. 710 [5 न्यायाधीशों की पीठ]

5 ए.आई.आर. 1939 पी.सी. 47 [5 न्यायाधीशों की पीठ]

"परिस्थितियाँ लेन-देन की परिस्थितियाँ होनी चाहिए: भय या संदेह को दर्शाने वाले सामान्य कथन, चाहे किसी विशेष व्यक्ति के संबंध में हों या अन्यथा, और जो मृत्यु की घटना से प्रत्यक्ष रूप से संबंधित न हों, ग्राह्य नहीं होंगे। परंतु मृतक द्वारा यह कथन कि वह उस स्थान पर जा रहा था जहाँ वास्तव में उसकी हत्या हुई, अथवा वहाँ जाने के उसके कारणों के संबंध में, अथवा कि वह किसी विशेष व्यक्ति से मिलने जा रहा था, अथवा कि उसे ऐसे व्यक्ति द्वारा मिलने के लिए आमंत्रित किया गया था– इनमें से प्रत्येक कथन लेन-देन की परिस्थितियाँ माने जाएंगे, और ऐसा तब भी होगा जब वह व्यक्ति अज्ञात हो, या वह अभियुक्त व्यक्ति न हो। ऐसा कथन वास्तव में अभियुक्त व्यक्ति के पक्ष में दोषमुक्त करने वाला भी हो सकता है। 'लेन-देन की परिस्थितियाँ' निस्संदेह एक ऐसा वाक्यांश है जो कुछ सीमाएँ व्यक्त करता है। यह 'परिस्थितिजन्य साक्ष्य' में इसके समान प्रयोग जितना व्यापक नहीं है, जिसमें सभी प्रासंगिक तथ्यों के साक्ष्य सम्मिलित होते हैं। दूसरी ओर, यह 'रेस जेस्टे' से अधिक संकीर्ण है। परिस्थितियों का वास्तविक घटना से कुछ निकट संबंध होना चाहिए: यद्यपि, उदाहरणार्थ, दीर्घकालिक विषप्रयोग के मामले में वे वास्तविक घातक मात्रा की तिथि से काफी दूरी की तिथियों से संबंधित हो सकती हैं। यह ध्यान देने योग्य है कि 'परिस्थितियाँ' उस लेन-देन की हैं जिसके परिणामस्वरूप कथनकर्ता की मृत्यु हुई। यह आवश्यक नहीं है कि कथनकर्ता की मृत्यु अंततः जिस लेन-देन के कारण हुई उसके अतिरिक्त कोई अन्य ज्ञात लेन-देन भी हो, क्योंकि साक्ष्य की ग्राहयता की शर्त यह है कि '(कथनकर्ता की) मृत्यु का कारण विचाराधीन हो'।"

11.3.1 प्रसिद्ध मामले **शरद बिर्धिचंद सरडा बनाम महाराष्ट्र राज्य**[6] में धारा 32 के अनुप्रयोग के संबंध में सिद्धांतों को निम्नलिखित रूप में उल्लेखित किया गया है: -

न्यायमूर्ति एस. मुर्तज़ा फ़ज़ल अली के अनुसार:-

"21. ...

(1) धारा 32 श्रुतलेख (हियर्से) के नियम का एक अपवाद है और ऐसे व्यक्ति के कथन को ग्राह्य बनाती है जिसकी मृत्यु हो गई हो, चाहे वह मृत्यु हत्या हो या आत्महत्या, बशर्ते कि कथन मृत्यु के कारण से संबंधित हो अथवा मृत्यु की ओर ले जाने वाली परिस्थितियों को दर्शाता हो। इस संबंध में, जैसा कि ऊपर संकेत किया गया

6 (1984) 4 एस.सी.सी. 116 [3 न्यायाधीशों की पीठ]

है, भारतीय साक्ष्य अधिनियम ने हमारे समाज की विशिष्ट परिस्थितियों तथा हमारे लोगों की विविध प्रकृति और चरित्र को ध्यान में रखते हुए, अन्याय से बचने के लिए धारा 32 के क्षेत्र को विस्तृत करना आवश्यक समझा है।

(2) निकटता की कसौटी को अत्यधिक शाब्दिक रूप से व्याख्यायित नहीं किया जा सकता और न ही इसे सार्वभौमिक अनुप्रयोग के किसी पूर्वनिर्धारित कठोर सूत्र तक सीमित किया जा सकता है। समय की दूरी प्रत्येक मामले की परिस्थितियों पर निर्भर करेगी अथवा उसके अनुसार भिन्न होगी। उदाहरणार्थ, जहाँ मृत्यु एक लंबे समय से चल रही सतत घटनाक्रम की तार्किक परिणति हो और मानो कहानी का अंतिम चरण हो, वहाँ उस घटनाक्रम के अंत से प्रत्यक्ष रूप से जुड़े प्रत्येक चरण के संबंध में किया गया कथन ग्राह्य होगा, क्योंकि पूरे कथन को एक समग्र रूप में पढ़ा जाना चाहिए, न कि उसे संदर्भ से अलग करके देखा जाना चाहिए। कभी-कभी ऐसे कथन, जो प्रासंगिक हों या तात्कालिक उद्देश्य को स्पष्ट करते हों, उन्हें भी मृत्यु से संबंधित लेन-देन का एक भाग मानते हुए ग्राह्य किया जा सकता है। यह स्पष्ट है कि ये सभी कथन केवल मृतक की मृत्यु के पश्चात ही प्रकाश में आते हैं, जो मानो मृत्यु से बोल रहा होता है। उदाहरणार्थ, जहाँ विवाह के बहुत कम समय के भीतर मृत्यु हो जाती है या समय की दूरी 3-4 महीनों से अधिक नहीं होती है, वहाँ ऐसा कथन धारा 32 के अंतर्गत ग्राह्य हो सकता है।

(3) धारा 32 की उपधारा (1) का द्वितीय भाग उस नियम का एक और अपवाद है कि दंड विधि में ऐसे व्यक्ति का साक्ष्य, जिसे अभियुक्त द्वारा जिरह के अधीन नहीं किया गया हो अथवा जिरह का अवसर नहीं दिया गया हो, निरर्थक माना जाएगा, क्योंकि जिरह के स्थान पर शपथ की गंभीरता और पवित्रता आ जाती है, इस सरल कारण से कि मृत्यु के निकट पहुँचा हुआ व्यक्ति असत्य कथन करने की संभावना नहीं रखता, जब तक कि यह दर्शाने के लिए प्रबल साक्ष्य न हो कि कथन प्रेरणा या प्रशिक्षण द्वारा प्राप्त किया गया था।

(4) यह उल्लेख करना महत्वपूर्ण हो सकता है कि धारा 32 केवल हत्या के संबंध में ही नहीं है, बल्कि इसमें आत्महत्या भी सम्मिलित है; अतः वे सभी परिस्थितियाँ जो हत्या के मामले को सिद्ध करने के लिए प्रासंगिक हो सकती हैं, वे आत्महत्या के मामले को सिद्ध करने के लिए भी समान रूप से प्रासंगिक होंगी।

(5) जहाँ मुख्य साक्ष्य मृतका द्वारा लिखे गए कथनों और पत्रों से संबंधित हो, जो उसकी मृत्यु से प्रत्यक्ष रूप से जुड़े हों या उससे संबंधित हों तथा जो एक स्पष्ट कथा प्रकट करते हों, ऐसे कथन स्पष्ट रूप से धारा 32 की परिधि में आएँगे और इसलिए ग्राह्य होंगे। ऐसे मामलों में केवल समय की दूरी ही कथन को अप्रासंगिक नहीं बनाएगी।"

11.4 अनेक निर्णयों में यह प्रतिपादित किया गया है कि यदि मृत्युकालीन कथन न्यायालय का विश्वास उत्पन्न करता है, तो वह, पुष्टिकरण के अभाव में भी, दोषसिद्धि का एकमात्र आधार बन सकता है। इस संबंध में **खुशल राव बनाम बंबई राज्य**[7], **सुरेश चंद्र जना बनाम पश्चिम बंगाल राज्य**[8] तथा **जयम्मा बनाम कर्नाटक राज्य**[9] के मामलों का संदर्भ दिया जा सकता है।

11.5 ऐसे कथन पर निर्भर करने के लिए यह आवश्यक है कि वह न्यायालय के पूर्ण विश्वास को संतुष्ट करे, क्योंकि ऐसा कथन करने वाला व्यक्ति अब जिरह, स्पष्टीकरण अथवा इस प्रकार की किसी अन्य कार्यवाही के लिए उपलब्ध नहीं रहता है।

11.5.1 **मदन बनाम महाराष्ट्र राज्य**[10] के मामले में, **राम बिहारी यादव बनाम बिहार राज्य**[11] के एक पूर्व निर्णय का उल्लेख करते हुए यह अवलोकन किया गया कि यदि मृत्युकालीन कथन न्यायालय के मन में विश्वास उत्पन्न करता है, तो न्यायालय को उस पर अवश्य भरोसा करना चाहिए।

11.5.2 इसी प्रकार, इस न्यायालय ने **पन्नीरसेल्वम बनाम तमिलनाडु राज्य**[12] में यह अवलोकन किया है: -

"यद्यपि मृत्युकालीन कथन को अत्यधिक महत्व दिया जाता है, तथापि यह उल्लेखनीय है कि अभियुक्त को जिरह करने का कोई अधिकार प्राप्त नहीं होता है। सत्य को उजागर करने के लिए ऐसा अधिकार उतना ही आवश्यक है, जितना कि शपथ का दायित्व हो सकता है। यही कारण है कि न्यायालय यह भी आग्रह करता है कि मृत्युकालीन कथन इस प्रकार का होना चाहिए कि उसकी शुद्धता

---

7 ए.आई.आर. 1958 एस.सी. 22 [3 न्यायाधीशों की पीठ]

8 (2017) 16 एस.सी.सी. 466 [2 न्यायाधीशों की पीठ]

9 (2021) 6 एस.सी.सी. 213 [3 न्यायाधीशों की पीठ]

10 (2019) 13 एस.सी.सी. 464 [2 न्यायाधीशों की पीठ]

11 (1998) 4 एस.सी.सी. 517 [2 न्यायाधीशों की पीठ]

12 (2008) 17 एस.सी.सी. 190 [3 न्यायाधीशों की पीठ]

के संबंध में न्यायालय के पूर्ण विश्वास को प्रेरित करे।"

11.5.3 हालाँकि, सावधानी का एक संकेत भी दिया गया है। यदि ऐसा कथन न्यायालय के मन में विश्वास उत्पन्न नहीं करता है, अर्थात् उसकी शुद्धता और प्रामाणिकता के संबंध में संदेह विद्यमान हो, तो पुष्टिकारी साक्ष्य के अभाव में उस पर कार्यवाही नहीं की जानी चाहिए।

11.5.3.1 **पानीबेन बनाम गुजरात राज्य**[13] में यह अवलोकन किया गया–

"न्यायालय को सतर्क रहना चाहिए कि मृतक का कथन न तो किसी प्रकार की सिखावन, प्रेरणा अथवा कल्पना का परिणाम हो।"

के. रामचंद्र रेड्डी बनाम लोक अभियोजक[14] का भी संदर्भ दिया जा सकता है।

11.6 न्यायालय को यह संतुष्ट होना चाहिए कि ऐसा कथन करते समय मृतक "सुदृढ़ मानसिक अवस्था" में था। **शमा बनाम हरियाणा राज्य**[15] में यह माना गया है कि सुदृढ़ मानसिक अवस्था, घटना के समय की स्थिति तथा परिस्थितियों को स्मरण रखने की क्षमता के साथ-साथ, न्यायालय की संतुष्टि के लिए एक आवश्यक पूर्वापेक्षा है।

11.6.1 **उत्तम बनाम महाराष्ट्र राज्य**[16] में यह विचार किया गया कि अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्यों के आधार पर यह निर्धारित करना न्यायालय का कार्य है कि कथन के समय मानसिक अवस्था सुदृढ़ थी या नहीं।

11.6.2 मृत्युकालीन कथन करने वाले व्यक्ति की मानसिक अवस्था का निर्धारण करने के लिए न्यायालय सामान्यतः चिकित्सीय साक्ष्य पर निर्भर करता है।[17] तथापि, समान रूप से यह भी प्रतिपादित किया गया है कि यदि कथन किए जाने के समय उपस्थित साक्षी यह कहते हैं कि मृतक कथन करते समय सुदृढ़ मानसिक अवस्था में था, तो ऐसा कथन चिकित्सक के मत पर प्रधान होगा।

13 (1992) 2 एस.सी.सी. 474 [2 न्यायाधीशों की पीठ]

14 (1976) 3 एस.सी.सी. 618 [2 न्यायाधीशों की पीठ]

15 (2017) 11 एस.सी.सी. 535 [2 न्यायाधीशों की पीठ]

16 (2022) 8 एस.सी.सी. 576 [2 न्यायाधीशों की पीठ]

17 (2008) 4 एस.सी.सी 265 [2 न्यायाधीशों की पीठ]

[18] कथन दिए जाने के समय उपस्थित गवाहों के कथनों को चिकित्सक की राय पर वरीयता दिए जाने के इस सिद्धांत की पुनः पुष्टि ***उत्तम*** *(उपर्युक्त)* में की गई है।

11.6.3 तथापि, लक्ष्मण (उपर्युक्त) में यह भी प्रतिपादित किया गया है कि मृत्युकालीन कथन करने वाले व्यक्ति की "सुदृढ़ मानसिक अवस्था" के संबंध में चिकित्सक के प्रमाण-पत्र का मात्र अभाव ही ऐसे कथन को स्वतः ही अस्वीकार्य नहीं बना देता। इस स्थिति को **सुरेन्द्र बंगाली उर्फ सुरेन्द्र सिंह रूटेले बनाम झारखंड राज्य**[19] में पुनः स्वीकार किया गया है।

11.7 ऐसे कथनों की बहुलता के मामले में यह प्रतिपादित किया गया है कि उनकी संख्या नहीं, बल्कि ऐसे कथन की विश्वसनीयता ही उसके साक्ष्यात्मक मूल्य का निर्धारण करती है। उक्त सिद्धांत, जैसा कि ***अमोल सिंह बनाम मध्य प्रदेश राज्य***[20] में प्रतिपादित किया गया, इस प्रकार है:-

"13. ... मृत्यु-पूर्व कथनों की बहुलता नहीं, बल्कि उनकी विश्वसनीयता ही अभियोजन के मामले को बल प्रदान करती है। यदि कोई मृत्यु-पूर्व कथन स्वैच्छिक, विश्वसनीय तथा स्वस्थ मानसिक अवस्था में किया गया पाया जाता है, तो उस पर बिना किसी पुष्टिकरण के भी भरोसा किया जा सकता है [परंतु] कथन समग्र रूप से सुसंगत होना चाहिए। ... तथापि, यदि एक मृत्यु-पूर्व कथन और दूसरे के बीच कुछ असंगतियाँ पाई जाती हैं, तो न्यायालय को उन असंगतियों की प्रकृति का परीक्षण करना होगा, अर्थात् वे महत्वपूर्ण हैं या नहीं [और] विभिन्न मृत्यु-पूर्व कथनों की विषयवस्तु का परीक्षण करते समय, ऐसी स्थिति में न्यायालय को आसपास के विभिन्न तथ्यों एवं परिस्थितियों के आलोक में उनका परीक्षण करना होगा।"

11.7.1 अनेक मृत्यु-पूर्व कथनों की स्थिति में, इस न्यायालय ने ***लखन बनाम मध्य प्रदेश राज्य***[21] में यह अवलोकन किया–

"21. .... ऐसी स्थिति में किसी पुष्टिकरण की आवश्यकता नहीं होती है। यदि

---

18 (2002) 6 एससीसी 710 [5 न्यायाधीशों की पीठ]

19 आपराधिक अपील संख्या 1078/2010 [2 न्यायाधीशों की पीठ]

20 (2008) 5 एससीसी 468 [2 न्यायाधीशों की पीठ]

21 (2010) 8 एससीसी 514 [2 न्यायाधीशों की पीठ]

एक से अधिक मृत्यु-पूर्व कथन हों तथा उनमें परस्पर असंगतियाँ हों, तो सामान्यतः मजिस्ट्रेट जैसे उच्च अधिकारी द्वारा अभिलिखित मृत्यु-पूर्व कथन पर भरोसा किया जा सकता है, बशर्ते उसकी सत्यता के संबंध में कोई संदेह उत्पन्न करने वाली परिस्थिति न हो। यदि ऐसी परिस्थितियाँ हों जिनमें कथन स्वैच्छिक रूप से नहीं किया गया हो अथवा अन्य साक्ष्यों द्वारा समर्थित न हो, तो न्यायालय को प्रत्येक मामले के तथ्यों का अत्यंत सावधानीपूर्वक परीक्षण कर यह निर्णय लेना होगा कि किन कथनों पर विश्वास किया जाना उचित है।"

11.7.2 इस न्यायालय ने, इस संबंध में, **जगबीर सिंह बनाम राज्य (एनसीटी दिल्ली)**[22], में निम्नानुसार निष्कर्ष निकाला–

"**32**. हम यह मानते हैं कि इस न्यायालय द्वारा प्रतिपादित विधि के समग्र अवलोकन के आधार पर, जब एक से अधिक मृत्यु-पूर्व कथन हों, तथा पूर्ववर्ती मृत्यु-पूर्व कथन में अभियुक्त को आरोपित नहीं किया गया हो, किन्तु बाद के मृत्यु-पूर्व कथन में मृतक द्वारा पूर्ण परिवर्तन किया गया हो, तो प्रत्येक मामले का निर्णय उसके तथ्यों के आधार पर किया जाना चाहिए। न्यायालय अपने इस कर्तव्य से मुक्त नहीं होगा कि वह समस्त अभिलेखों के साथ-साथ विभिन्न मृत्यु-पूर्व कथनों के किए जाने की परिस्थितियों का सावधानीपूर्वक परीक्षण करे। यदि न्यायालय यह पाता है कि आरोपात्मक मृत्यु-पूर्व कथन वास्तविक स्थिति को प्रकट करता है, विशेषकर मृतक की ऐसे कथन करने की क्षमता, उसके स्वैच्छिक रूप से किए जाने (जिसमें निःसंदेह परामर्श या प्रेरणा को अपवर्जित करना सम्मिलित है) तथा अन्य साक्ष्यों के साथ, जो उस आरोपात्मक मृत्यु-पूर्व कथन की विषयवस्तु का समर्थन करते हों, तो उस पर कार्यवाही की जा सकती है। समान रूप से, वे परिस्थितियाँ जो पूर्ववर्ती मृत्यु-पूर्व कथन को ग्राह्य अथवा अयोग्य बनाती हैं, उनका भी विचार किया जा सकता है।"

11.8 मृत्यु-पूर्व कथन के अभिलेखन में मजिस्ट्रेट की उपस्थिति अनिवार्य नहीं है, बल्कि केवल सावधानी का एक नियम है। इस संबंध में **जयम्मा** *(उपर्युक्त)* में, इस न्यायालय ने यह अवलोकन किया :

---

22 (2019) 8 एससीसी 779 [2 न्यायाधीशों की पीठ]

> "...विधि यह अनिवार्य रूप से अपेक्षित नहीं करती है कि मृत्यु-पूर्व कथन के अभिलेखन के लिए न्यायिक या कार्यपालक मजिस्ट्रेट की उपस्थिति हो, अथवा यह कि न्यायिक या कार्यपालक मजिस्ट्रेट द्वारा अभिलिखित किए बिना मृत्यु-पूर्व कथन को एकमात्र साक्ष्य के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता। यह केवल सावधानी का एक नियम है, और यदि तथ्यों एवं परिस्थितियों द्वारा अनुमति दी जाए, तो अभियोजन के मामले को अतिरिक्त बल प्रदान करने के लिए मृत्यु-पूर्व कथन को अधिमानतः न्यायिक या कार्यपालक मजिस्ट्रेट द्वारा अभिलिखित किया जाना चाहिए।"

लक्ष्मण *(उपर्युक्त)* में संविधान पीठ के संदर्भ में, यह सिद्धांत कि मृत्यु-पूर्व कथन का अभिलेखन अनिवार्यतः मजिस्ट्रेट द्वारा किया जाना आवश्यक नहीं है, ***राजाराम बनाम मध्य प्रदेश राज्य***[23] में पुनः दोहराया गया है।

11.9 मृत्यु-पूर्व कथन को उसकी संक्षिप्तता के कारण अस्वीकार नहीं किया जाना चाहिए, जैसा कि ***सूरजदेव ओझा बनाम बिहार राज्य***[24] में प्रतिपादित किया गया है।

11.9.1 ***महाराष्ट्र राज्य बनाम कृष्णमूर्ति लक्ष्मीपति नायडू***[25] में यह अवलोकन किया गया कि यदि मृत्यु-पूर्व कथन संक्षिप्त होते हुए भी आवश्यक जानकारी समाहित करता है, तो न्यायालय उसे उपेक्षित करने के लिए उचित नहीं होंगे।

11.9.2 वस्तुतः, ***लक्ष्मण*** में संविधान पीठ ने इस सिद्धांत को पुनः दोहराते हुए कहा–

> "केवल इस कारण कि मृत्यु-पूर्व कथन में घटना का विवरण सम्मिलित नहीं है, उसे अस्वीकार नहीं किया जा सकता है, और यदि केवल संक्षिप्त कथन हो, तो वह इस कारण अधिक विश्वसनीय होता है कि कथन की संक्षिप्तता स्वयं उसकी सत्यता की गारंटी होती है।"

---

23 2022 एससीसी ऑनलाइन एससी 1733 [2 न्यायाधीशों की पीठ]

24 1980 सप्लीमेंट एससीसी 769 [2 न्यायाधीशों की पीठ]

25 1980 सप्लीमेंट एससीसी 455 [2 न्यायाधीशों की पीठ]

11.10 मृत्यु-पूर्व कथन को लिखित रूप में अभिलिखित करने वाले व्यक्ति का परीक्षण आवश्यक है। विशेष रूप से, साक्ष्य के प्रस्तुत न किए जाने के संबंध में किसी स्पष्टीकरण के अभाव में, ऐसा ***गोविंद नारायण बनाम राजस्थान राज्य***[26] में अवलोकित किया गया है।

11.10.1 वास्तव में, में, **कंस राज बनाम पंजाब राज्य**[27] में यह निर्णय दिया गया था: -

> "11. ...ऐसे कथन को ठोस साक्ष्य बनाने के लिए, उस पर निर्भर करने वाला व्यक्ति या अभिकरण इस कथन के किए जाने को एक तथ्य के रूप में सिद्ध करने के लिए विधिक रूप से बाध्य है। यदि यह लिखित है, तो लेखक (लिपिक) को न्यायालय में प्रस्तुत किया जाना चाहिए और यदि यह मौखिक है, तो इसे उस व्यक्ति की जाँच (परीक्षण) करके सिद्ध किया जाना चाहिए जिसने मृतक को यह कथन करते हुए सुना हो।" तथा;
>
> **सुधाकर बनाम महाराष्ट्र राज्य**[28] में, इस न्यायालय ने स्पष्ट रूप से अवलोकन किया: -
>
> "5. यदि यह लिखित है, तो लिपिक को न्यायालय में प्रस्तुत किया जाना चाहिए और यदि यह मौखिक है, तो इसे उस व्यक्ति की जाँच करके सिद्ध किया जाना चाहिए जिसने मृतक को यह कथन करते हुए सुना हो। तथापि, उन मामलों में जहाँ मूल रूप से अभिलेखित मृत्यु पूर्व कथन के खो जाने और उपलब्ध न होने का प्रमाण हो जाता है, अभियोजन को उसका द्वितीयक साक्ष्य प्रस्तुत करने का अधिकार है।"

11.11 जब कोई न्यायालय मृत्यु पूर्व कथन से संबंधित किसी मामले से व्यवहार करता है, तब वे प्रश्न जिन्हें किसी न्यायालय को अवश्य पूछना चाहिए, जैसा कि इस न्यायालय द्वारा **इरफान उर्फ नाका बनाम उत्तर प्रदेश राज्य**[29] में सूचीबद्ध किया गया है, तथा

---

26 1993 अनुपूरक (3) एस.सी.सी. 343 [2 न्यायाधीशों की पीठ]

27 (2000) 5 एस.सी.सी. 207 [3 न्यायाधीशों की पीठ]

28 (2000) 6 एस.सी.सी. 671 [3 न्यायाधीशों की पीठ]

29 2023 एस.सी.सी. ऑनलाइन एस.सी. 1060 [3 न्यायाधीशों की पीठ]

उपर्युक्त से संकलित सिद्धांतों के साथ मिलकर, उस पूर्ण दायरे का निर्माण करते हैं जो किसी मृत्यु पूर्व कथन को प्रदान किए जाने वाले भार का निर्णय करते समय न्यायालय के पक्ष से आवश्यक होता है।

12. प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य निस्संदेह अन्य प्रकार के साक्ष्यों की अपेक्षा बेहतर होता है और इसे प्रबल प्रकृति का साक्ष्य माना जाता है। सिद्धांत यह है कि यदि प्रत्यक्षदर्शी का साक्ष्य "पूर्णतः विश्वसनीय" है, तो न्यायालय उसी के आधार पर दोषसिद्धि कर सकता है। यह उन मामलों में भी लागू होता है जहाँ केवल एकमात्र प्रत्यक्षदर्शी हो।[30]

13. वर्तमान तथ्यों में, विचारण न्यायालय ने ऐसे साक्ष्य पर अविश्वास किया है। प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य का त्याग एक तथ्य-विशिष्ट जाँच है, और इसलिए विचारण न्यायालय द्वारा ऐसी कार्रवाई के संशोधन पर बाद में चर्चा की जाएगी।

14. परिस्थितिजन्य साक्ष्य पर विधि सुस्थापित है। इस विषय पर प्रमुख निर्णय **शरद बिर्धीचंद सरडा** (उपर्युक्त) है, जिसका अनुसरण अत्यंत हाल तक **कमल बनाम राज्य (राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली)**[31] में निरंतर किया गया है।

14.1 उदाहरणार्थ, **गार्गी बनाम हरियाणा राज्य**[32] में इस न्यायालय ने, विभिन्न पूर्ववर्ती निर्णयों का संदर्भ देते हुए, परिस्थितिजन्य साक्ष्य से संबंधित सिद्धांतों का सार प्रस्तुत किया है। सिद्धांत यह है कि परिस्थितियों का कुल योग, जब परीक्षण किया जाए, तो वह अभियुक्त के दोष की ओर संकेत करना चाहिए, जबकि अन्य सभी संभावित परिकल्पनाओं, जिसमें उसकी निर्दोषता तथा किसी दूसरे पक्ष के दोष का अभाव भी शामिल है, को निरस्त करता हो। आगे संदर्भ **इन्द्रजीत दास बनाम त्रिपुरा राज्य**[33] **तथा प्रकाश निषाद बनाम महाराष्ट्र राज्य**[34] का किया जा सकता है।

<u>इस न्यायालय द्वारा विचार</u>

---

30 (1993) 3 एस.सी.सी. 282 [2 न्यायाधीशों की पीठ]

31 2023 एस.सी.सी. ऑनलाइन एस.सी. 933 [2 न्यायाधीशों की पीठ]

32 (2019) 9 एस.सी.सी. 738 [2 न्यायाधीशों की पीठ]

33 2023 एस.सी.सी. ऑनलाइन एस.सी. 201 [2 न्यायाधीशों की पीठ]

34 2023 एस.सी.सी. ऑनलाइन एस.सी. 666 [3 न्यायाधीशों की पीठ]

15. वह मृत्युपूर्व कथन, जो उपर्युक्त नामित अभियुक्त के अभियोजन का मुख्य आधार है, निम्नलिखित है-

"टी.वी. बायरेगौड़ा, पिता- वेंकटप्पा, आयु 41 वर्ष, वोक्कालिगा, कृषि कार्य, निवासी- थोटलिगनहल्ली, शिडलघट्टा तालुक।

मैं उपर्युक्त उल्लिखित पते पर निवास करता हूँ तथा कृषि से अपना जीविकोपार्जन करता हूँ। आज दिनांक 06/08/1997 को प्रातः लगभग 8 बजे, मैं तथा मेरे भाई नारायणस्वामी, राजन्ना एवं गोपालरेड्डी और हमारे मजदूर मारप्पा अपने खेत पर कार्य हेतु गए थे। जब हम अपने खेत में कार्य कर रहे थे, तब लगभग 9:30 बजे हमारे गाँव के बच्छन्ना के पुत्रगण अर्थात् (1) मंजनाथ, (2) रामेगौड़ा, (3) रायप्पा, पिता- नारायणप्पा, (बच्छन्ना के पुत्र), (4) रमेश, पिता- चिक्कवेंकटरायप्पा, (5) मंजनाथ, (6) रमंजनप्पा, (7) द्यावप्पा, पिता- नारायणप्पा, (8) द्यावप्पा, पिता- चिक्का मुनीशामप्पा तथा अन्य व्यक्तियों ने अवैध जमावड़ा बनाकर, अपने हाथों में घातक हथियार लेकर हमारे खेत में आए और मुझे तथा मेरे भाइयों को अश्लील भाषा में गाली-गलौज करते हुए हथियारों से हमला किया। अभियुक्त व्यक्तियों को देखकर मेरे मजदूर एवं मेरे भाई अपनी जान बचाने के लिए वहाँ से भाग गए। मैंने भी अभियुक्तों से बचने के लिए भागने का प्रयास किया, उसी समय मंजनाथ ने जबरन लोहे की छड़ से मेरे सिर पर प्रहार किया, जिससे मैं गिर पड़ा और तत्पश्चात रमेश ने हंसिया से मेरे पैरों पर प्रहार किया तथा रामेगौड़ा ने मेरे दाहिने पैर पर हंसिया से प्रहार किया। रायप्पा एवं अन्य व्यक्तियों ने अपने हाथों में डंडे लेकर मेरे पूरे शरीर पर प्रहार किया। मेरे दोनों हाथ और पैर अव्यवस्थित (डिसलोकेट) हो गए, जिससे रक्तस्रावयुक्त चोटें आईं। मुझे अन्य रक्तस्रावयुक्त चोटें भी लगीं। इसके पश्चात मारप्पा, पिता- अंजनप्पा, बी.के. रमेश गौड़ा, पिता- कृष्णप्पा तथा चंद्रप्पा, पिता- वेंकटे गौड़ा, जो हमारे गाँव के निवासी हैं, उन्होंने मुझे अभियुक्तों के कब्जे से छुड़ाया और उपचार हेतु शासकीय अस्पताल, शिडलघट्टा में भर्ती कराया। मैं प्रार्थना करता हूँ कि जिन अभियुक्त व्यक्तियों ने मुझे गंभीर चोटें पहुँचाते हुए हमला किया है, उनके विरुद्ध विधि सम्मत कार्रवाई की जाए तथा हमें सुरक्षा प्रदान की जाए।

"पढ़कर सुनाया गया एवं सही पाया गया।
टी.वी. बायरेगौड़ा का बाएँ अंगूठे का निशान"
(जोर दिया गया)

16. यह PW1 (चिकित्सक) एवं PW19 (पुलिस अधिकारी) के साक्ष्य से प्रकट होता है कि मृतक का मृत्युपूर्व कथन उनके समक्ष किया गया था। PW1 ने कहा– "जब पुलिस ने घायल का कथन दर्ज किया, तब मैं उपस्थित था तथा उक्त कथन पर मैंने अनुमोदन भी किया। वर्तमान में चिह्नित कथन Ex.P.1 है, Ex.P.1 (a) मेरा अनुमोदन है तथा Ex.P.1 (b) मेरा हस्ताक्षर है।" तथा PW19 ने कहा– "मैं अस्पताल पहुँचा और चिकित्सक की उपस्थिति में घायल बायरेगौड़ा से पूछताछ कर उसका कथन दर्ज किया। उक्त कथन Ex.P.1 के रूप में चिह्नित है तथा मेरा हस्ताक्षर Ex.P.1 (b) के रूप में चिह्नित है। उक्त कथन पर चिकित्सक ने भी हस्ताक्षर किया है।"

17. अभिलेख, अर्थात् PW19 के साक्ष्य से यह भी प्रकट होता है कि यद्यपि उसने मृतक द्वारा दिए गए मृत्युपूर्व कथन पर हस्ताक्षर किया था, तथापि जिरह से यह स्पष्ट होता है कि उसने स्वयं उक्त कथन को लिखित रूप में दर्ज नहीं किया था। यह कहा गया:-

> "Ex. P.1 में निहित सामग्री मेरे हस्तलेख में नहीं है। उक्त दस्तावेज़ में यह उल्लेख नहीं है कि उक्त दस्तावेज़ किसके द्वारा लिखा गया है।"

आगे, अपने पुनः परीक्षण में उसने कहा कि–

> "Ex. P.1 की सामग्री हमारे थाने के कर्मचारी नटराज के हस्तलेख में है। उक्त कथन मृतक द्वारा बताए अनुसार तथा मेरे द्वारा बताए जाने पर दर्ज किया गया था। चूँकि मृतक के दाहिने हाथ में भी चोट लगी थी, इसलिए वह उस पर हस्ताक्षर करने की स्थिति में नहीं था..."

और PW1 ने मृत्युपूर्व कथन दर्ज करने वाले व्यक्ति के संबंध में निम्नलिखित कहा:-

> "मैं उस पुलिस कर्मी का नाम या पदनाम नहीं बता सकता जिसने घायल का कथन दर्ज किया। हमारे अभिलेखों में भी यह उल्लेख नहीं है कि कथित रूप से घायल का कथन किस समय दर्ज किया गया। यह सत्य है कि कथित रूप से घायल का कथन दर्ज करने से पूर्व न तो पुलिस ने मुझसे लिखित रूप में कोई अनुरोध किया था और न ही मैंने उन्हें घायल का कथन दर्ज करने की कोई

लिखित अनुमति दी थी। यह भी सत्य है कि जब कथित रूप से घायल का कथन दर्ज किया गया, उस समय उसके आसपास अनेक व्यक्ति उपस्थित थे। यह सुझाव देना असत्य है कि उस दिन घायल किसी भी प्रकार का कथन देने की स्थिति में नहीं था तथा पुलिस ने उस समय उसका कथन दर्ज नहीं किया, जैसा कि Ex. P.1 में उल्लेखित है।"

18. तब प्रश्न यह उठता है कि उक्त कथन किसने दर्ज किया? उसका नाम क्या था? यदि वह पुलिस कर्मी था तो उसका पदनाम क्या था?–यह सब इस साक्षी द्वारा नहीं बताया गया है। उल्लेखनीय है कि इस साक्षी ने उक्त कथन की सामग्री की सत्यता अथवा असत्यता के संबंध में भी कोई कथन नहीं किया है। यह कहा गया कि ऐसे कथन के दर्ज किए जाने के समय "उसके आसपास अनेक व्यक्ति उपस्थित थे।" ये व्यक्ति कौन थे, यह भी एक ऐसा पहलू है जो अस्पष्ट ही बना हुआ है। क्या इन व्यक्तियों का परीक्षण किया गया था, यह भी अज्ञात है। मृत्युपूर्व कथन पर मृतक द्वारा अंगूठे का निशान किया गया है, परंतु अभियोजन का यह मामला नहीं है कि मृतक निरक्षर था। चिकित्सक ने भी यह नहीं कहा कि घायल हस्ताक्षर करने की स्थिति में था। ऐसे में अंगूठे का निशान क्यों लिया गया, यह एक रहस्य बना हुआ है, जो उक्त कथन की प्रामाणिकता अथवा शुद्धता पर गंभीर संदेह उत्पन्न करता है।

19. तथापि, लिपिक के परीक्षण न किए जाने का कारण स्वयं स्पष्ट नहीं होता है। न तो विचारण न्यायालय और न ही उच्च न्यायालय द्वारा कहीं यह कहा गया है कि लिपिक का परीक्षण किस कारण या किस विशेष कारणवश नहीं किया जा सका। **सुधाकर** (उपर्युक्त) में इस न्यायालय ने यह अभिधारित किया है कि यदि मूल मृत्युपूर्व कथन खो जाता है और इस कारण उपलब्ध नहीं होता है, तो अभियोजन उसके समर्थन में द्वितीयक साक्ष्य प्रस्तुत कर सकता है। उक्त अभिधारण का तार्किक विस्तार यह होगा कि यदि लिपिक, नियंत्रण से परे कारणों जैसे अक्षमता या मृत्यु के कारण उपलब्ध न हो, तो अभियोजन के लिए आवश्यक द्वितीयक साक्ष्य का सहारा लेना खुला रहेगा। तथापि, वर्तमान प्रकरण में ऐसी स्थिति नहीं होने के कारण, इस प्रकार लिपिक के परीक्षण का अस्पष्ट रूप से न किया जाना, **गोविंद नारायण** (उपर्युक्त), **कंस राज** (उपर्युक्त) तथा **सुधाकर** (उपर्युक्त) में प्रतिपादित सिद्धांतों के परिणामस्वरूप, प्रकरण को संदिग्ध बना देता है, यदि कि यह अभियोजन के मामले पर घातक प्रहार न भी करे।

20. यह विधि में स्थापित सिद्धांत है कि मृत्युपूर्व कथन की प्रकृति को देखते हुए यह आवश्यक है कि ऐसा कथन किसी प्रकार की सिखावन, प्रेरणा अथवा कल्पना का परिणाम न हो। किंतु PW1 (चिकित्सक) के कथन से यह प्रकट होता है कि जब मृत्युपूर्व कथन किया जा रहा था, उस समय उसके आसपास अनेक व्यक्ति उपस्थित थे। ऐसी स्थिति में क्या यह

स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि मृतक द्वारा किया गया कथन किसी प्रकार की सिखावन या प्रेरणा से मुक्त है?

21. इस प्रश्न का उत्तर प्राप्त करने के लिए, हमने अभिलेख का हिस्सा रहे उन साक्ष्यों का स्वतंत्र रूप से मूल्यांकन किया है, जो वर्तमान अपील के न्यायनिर्णयन के लिए प्रासंगिक हैं।

21.1 अभियोजन ने अनेक स्वतंत्र साक्षियों के साक्ष्य के माध्यम से प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य प्रस्तुत कर अभियुक्त के दोष को स्थापित करने का प्रयास किया है।

21.2 PW-2 ने अभियोजन का समर्थन नहीं किया है और शत्रुतापूर्ण घोषित किए जाने तथा विस्तृत जिरह किए जाने के बावजूद, उसके साक्ष्य से अभियोजन के पक्ष में कोई लाभकारी तथ्य प्राप्त नहीं हो सका। उसने केवल इतना कहा है कि "गाँव की दिशा से 50 से 60 व्यक्तियों का एक समूह खेत की ओर आ रहा था। यह देखकर मैं गाँव की ओर चला गया।" मृतक के घर की महिलाएँ आईं और उन्होंने सूचित किया कि मृतक को चोटें आई हैं, इसलिए उसे अस्पताल में उपचार की आवश्यकता है। उसने पुलिस द्वारा तैयार किए गए दस्तावेजों पर अपने अंगूठे का निशान लगाए जाने से इंकार किया है और उल्लेखनीय है कि इस तथ्य को किसी वैज्ञानिक साक्ष्य द्वारा सिद्ध नहीं किया गया है।

21.3 इस मुद्दे पर हम PW-9 (मृतक की माता) के साक्ष्य का भी संज्ञान लेते हैं, जिन्होंने केवल इतना कहा है कि अस्पताल में मृतक ने उन्हें बताया कि "न्यायालय के समक्ष उपस्थित अभियुक्त व्यक्तियों" ने उसे मारा-पीटा और घायल किया। किंतु यह कथन किसी भी प्रकार से अभियोजन के लिए सहायक नहीं है, क्योंकि यह न केवल श्रुतलेख (हियरसे) प्रकृति का है, बल्कि अन्वेषण के दौरान पुलिस द्वारा भी इसका संज्ञान नहीं लिया गया था, अतः यह मात्र एक परवर्ती सुधार एवं अतिशयोक्ति प्रतीत होता है। इसी प्रकार का प्रभाव PW-10 (मृतक की पत्नी) के साक्ष्य का भी है। PW-11 एवं PW-12 का साक्ष्य किसी महत्व का नहीं है, क्योंकि वे घटना के प्रत्यक्षदर्शी साक्षी नहीं हैं।

21.4 PW-3 ने कहा कि 25 से 30 व्यक्तियों का एक समूह मृतक तथा अन्य व्यक्तियों, अर्थात् PW-5, PW-6, PW-7 एवं PW-2, जो गाँव के निकट खेतों में कार्य कर रहे थे, की ओर बढ़ रहा था। वही व्यक्ति था जिसने मृतक को अस्पताल पहुँचाया।

तथापि, उसके जिरह के दौरान यह स्पष्ट होता है कि उस दुर्भाग्यपूर्ण दिन की घटनाओं के संबंध में उसकी स्मृति अस्पष्ट थी। उसका तीन बार परीक्षण किया गया था। यह भी प्रकट होता है कि अनेक तथ्यों के संबंध में इस साक्षी ने अन्वेषण अधिकारियों के समक्ष कोई कथन नहीं दिया था। वह यह अवश्य कहता है कि जिस स्थान पर मृतक को रखा गया था, वहाँ नीलगिरी के पेड़ थे। किंतु उसके साक्ष्य से यह स्पष्ट नहीं होता कि अभियुक्त को उस विशेष स्थान पर किसने रखा था।

21.5 PW-4, जो मृतक का भाई है, के अनुसार घटना की तिथि से पूर्व, दिनांक 4 अगस्त, 1997 को मार्ग के उपयोग को लेकर PW-4 और शंकरप्पा के बीच एक अन्य विवाद हुआ था। घटना के दिन, उसने साक्ष्य दिया है कि 25 से 30 व्यक्तियों का एक समूह, जो लोहे की जंजीर, डंडे तथा हंसिया जैसे हथियारों से लैस था, उस खेत में आया जहाँ वह अन्य व्यक्तियों के साथ कार्य कर रहा था। उसने कहा कि जब वे भयवश वहाँ से भाग जाने के 10 या 15 मिनट बाद वापस लौटे, तब उस सशस्त्र समूह के आने के पश्चात, मृतक के पास PW-6 सहित अन्य व्यक्ति उपस्थित थे। उसने अभियुक्त व्यक्तियों और मृतक के परिवार के बीच शत्रुता होने के तथ्य का भी उल्लेख किया है। उसने यह कथन असत्य बताया कि उसके भाई पर हमला करने के पश्चात कुछ व्यक्तियों ने उसे PW-11 के खेत में फेंक दिया था।

21.6 PW-15 ने अपने साक्ष्य में कहा है कि नीलगिरी के बागान से लौटने पर उसने अभियुक्त को घायल अवस्था में बागान के दक्षिणी भाग की ओर पड़ा हुआ पाया। वहाँ PW-4 और PW-5 भी उपस्थित थे। मृतक को अस्पताल ले जाने के बाद यह साक्षी गाँव वापस चला गया। उसने यह भी कहा कि घटना के लगभग एक सप्ताह बाद कई बरामदगियाँ की गईं और वह वहाँ उपस्थित था तथा उसने विभिन्न महाजरों पर हस्ताक्षर किए। अभियुक्त और मृतक के बीच शत्रुता के संबंध में उसने कहा कि वह समझौते के माध्यम से समाप्त हो गई थी।

21.7 यह ध्यान में रखते हुए कि किसी अन्य साक्षी ने उस प्रकार से, जिस प्रकार PW-15 ने कथन किया है, मृतक को नीलगिरी के पत्तों पर पड़ा हुआ देखने के संबंध में कोई साक्ष्य नहीं दिया, विचारण न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकाला कि अभिलेख पर उपलब्ध प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य से अधिक लाभ प्राप्त नहीं होता है।

21.8 हम पाते हैं कि इन साक्षियों में से कोई भी, चाहे वे प्रत्यक्षदर्शी साक्षी ही क्यों न हों, अभियुक्त व्यक्तियों के दोष को संदेह से परे स्थापित करने में सफल नहीं हुआ है। अवैध जमावड़े में सम्मिलित व्यक्तियों की संख्या के संबंध में साक्ष्यों में विरोधाभास है–एक साक्षी ने 50-60 व्यक्तियों की उपस्थिति बताई, जबकि अन्य ने समूह को 25-30 व्यक्तियों का बताया; यह भी स्पष्ट नहीं है कि मृतक किस प्रकार PW-11 के खेत में पहुँचा–जो कि कथित प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों PW-3 और PW-15 के बीच एक महत्वपूर्ण विरोधाभास है। PW-3 ने अपने मुख्य परीक्षण में कहा कि उसने महाजर पर हस्ताक्षर किया था, परंतु जिरह में यह सामने आया कि वह पढ़-लिख नहीं सकता था। घटना स्थल पर उसकी उपस्थिति के संबंध में कोई कारण नहीं बताया गया है–न तो वह उस गाँव का निवासी है और न ही उसके पास उस गाँव में भूमि है। इसके अतिरिक्त, उसे तीन बार परीक्षण किए जाने के कारण भी स्पष्ट नहीं हैं। उसके कथनों में समानताएँ या भिन्नताएँ, यदि कोई हों, स्पष्ट नहीं की गई हैं। यह भी स्थापित विधि सिद्धांत है कि किसी साक्ष्य का मूल्यांकन पृथक रूप से नहीं किया जा सकता। यह तर्कसंगत नहीं है कि कोई व्यक्ति, जो गाँव का निवासी नहीं है, केवल यह देखने के लिए घटना स्थल पर पहुँचे कि क्या हो रहा है, जबकि अन्य निकट संबंधी घटना स्थल से भागने का प्रयास कर रहे थे। हम देखते हैं कि पुलिस ने उससे तीन बार पूछताछ की और उसके बयान दर्ज किए। ऐसा क्यों किया गया–यह अस्पष्ट है। उसका यह कथन कि अभियुक्तों ने कहा "यह व्यक्ति अब समाप्त हो गया है, चलो चलते हैं" उसके पूर्व कथन में दर्ज नहीं है, जिससे उसका सामना कराया गया था। इसे संपूर्ण रूप से पढ़ा जाना आवश्यक है। PW-15 के साक्ष्य के साधारण अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि उसने मृतक को पहले से ही घायल अवस्था में देखा था, जिसका अर्थ है कि उसने वास्तव में अभियुक्तों को मृतक पर हमला करते हुए नहीं देखा। अतः उसका प्रत्यक्षदर्शी साक्षी के रूप में दर्जा संदिग्ध हो जाता है। PW-2 ने कहा कि उसने गाँव की दिशा से एक बड़े समूह को खेतों की ओर आते देखा और यह देखकर वह विपरीत दिशा, अर्थात् गाँव की ओर चला गया। PW-4 मृतक का भाई है, परंतु उसका आचरण अधिकतम असामान्य कहा जा सकता है, अथवा दूसरे शब्दों में, तर्क के प्रतिकूल है। संबंधी होने के बावजूद उसका व्यवहार एक अपरिचित व्यक्ति के समान है–विवाद स्थल से भाग जाना; मृतक को असहाय छोड़ देना; घायल अवस्था में मृतक को अस्पताल ले जाने के लिए उसके साथ न जाना। वस्तुतः, तत्काल पूर्व की घटना में विवाद उसी के साथ हुआ था, अतः

यदि हमलावरों का कोई उद्देश्य था, तो वह उसके विरुद्ध होना चाहिए था, न कि किसी अन्य के विरुद्ध। ऐसे आचरण को ध्यान में रखते हुए, हम उसके साक्ष्य को विश्वसनीय नहीं पाते हैं।"

21.9 हमारे विचार में, हम यह नहीं कह सकते कि इस साक्षी ने सत्य कथन किया है। इतना ही नहीं, जब हमने उसके साक्ष्य के जिरह वाले भाग का अवलोकन किया, तो उसका कथन विश्वास उत्पन्न करने वाला नहीं पाया गया। उसे यह स्मरण नहीं है कि पुलिस ने उस स्थान पर, जहाँ उसका भाई पड़ा हुआ था, कोई अन्वेषण किया था या नहीं। उसे यह भी याद नहीं है कि पुलिस गाँव में आई थी या नहीं। क्या इस प्रकार का अस्पष्ट इंकार साक्षी को अविश्वसनीय एवं अविश्वास योग्य बना देता है? ऐसा प्रतीत होता है कि यह साक्षी घटना स्थल पर उपस्थित नहीं था और उसे अभियोजन द्वारा सुझावों के आधार पर, वस्तुतः जैसा कि अभियुक्त द्वारा उसके समक्ष रखा गया, प्रस्तुत किया गया है।"

21.10 हम देखते हैं कि PW-5 का साक्ष्य PW-4 के समान है। उसने यह जोड़ा कि अभियुक्त व्यक्ति हथियारों से लैस होकर आए और चिल्लाने लगे "इन्हें पकड़ो, हम इन्हें मार डालेंगे।" उसने यह भी कहा कि अभियुक्तों को देखकर पीड़ित पक्ष के सभी सदस्य स्थल से भाग गए, जबकि मृतक भाग रहा था और हमलावरों ने उस पर लोहे की छड़, डंडे तथा हंसिया से हमला किया। उल्लेखनीय है कि जिरह के दौरान उसने अपने द्वारा किए गए कई सुधारों को स्वीकार किया; उसे यह स्मरण नहीं है कि उसने पुलिस को यह बताया था कि अभियुक्त अपने साथ लाए गए हथियारों के साथ गाँव की ओर बढ़ रहे थे। वास्तव में, उसका कथन न केवल आत्म-विरोधाभासी है, बल्कि अन्य साक्षियों के कथनों से भी विरोधाभासी है। उसने कहा कि हमलावरों के अतिरिक्त अन्य व्यक्ति भी उपस्थित थे और उनके समूह का हिस्सा थे। ऐसे व्यक्तियों का ठिकाना अज्ञात है और महत्वपूर्ण रूप से यह साक्षी यह नहीं बताता कि किस अभियुक्त के पास कौन-सा हथियार था और किसने वास्तव में मृतक के शरीर पर हमला किया या चोट पहुँचाई। उसने स्वीकार किया कि वह लगभग एक फरलांग की दूरी तक भाग गया और लगभग 10 मिनट तक पेड़ों के नीचे/पीछे छिपा रहा तथा अभियुक्तों के काफी समय पहले वहाँ से चले जाने के बाद ही वह पुनः स्थल पर लौटा।"

21.11 PW-19 यह स्वीकार करता है कि "दिनांक 06.08.1997 को PW-2 से 10 तथा 12 से 17 तक के साक्षियों ने मुझे यह नहीं बताया कि मृतक पर किसने, कहाँ और कैसे हमला किया। उक्त सभी व्यक्ति कथन देने के लिए उपलब्ध नहीं थे।"

21.12 उपर्युक्त तथ्यों को, जो अभियोजन साक्षियों के साक्ष्य से संबंधित हैं, ध्यान में रखते हुए हम पाते हैं कि ये साक्ष्य अविश्वसनीय एवं विश्वास के योग्य नहीं हैं। साक्ष्यों में आवश्यक एवं महत्वपूर्ण तथ्यों के संबंध में भिन्नता है, जैसे कि व्यक्तियों की संख्या, अभियुक्त किस प्रकार उस स्थान पर पाया गया जहाँ वह मिला, उसे कब देखा गया आदि।

22. किसी प्रत्यक्षदर्शी साक्षी पर विश्वास किए जाने हेतु, यह प्रतिपादित किया गया है कि उसका साक्ष्य उच्च कोटि (स्टर्लिंग क्वालिटी) का होना चाहिए। वह ऐसा होना चाहिए कि उसे प्रथम दृष्टया ही स्वीकार किया जा सके। इस सिद्धांत पर **राय संदीप @ दीपु उर्फ दीपु बनाम राज्य (राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली)**[35] में निम्नलिखित प्रकार से विचार किया गया है-

"22. हमारे विचार में, 'उत्कृष्ट साक्षी (स्टर्लिंग विटनेस)' अत्यंत उच्च गुणवत्ता एवं स्तर का होना चाहिए, जिसकी कथन-श्रृंखला निर्विवाद एवं अभेद्य हो। ऐसे साक्षी के कथन पर विचार करते समय न्यायालय को उसे बिना किसी संकोच के प्रथम दृष्टया स्वीकार करने में सक्षम होना चाहिए। ऐसे साक्षी की गुणवत्ता की परीक्षा के लिए उसका दर्जा महत्वहीन है, बल्कि उसके द्वारा दिए गए कथन की सत्यता ही प्रासंगिक है। अधिक महत्वपूर्ण यह है कि उसके कथन में प्रारंभ से अंत तक, अर्थात् जब साक्षी प्रारंभिक बयान देता है से लेकर न्यायालय के समक्ष अंतिम कथन तक, निरंतरता बनी रहनी चाहिए। उसका कथन स्वाभाविक होना चाहिए तथा अभियुक्त के संबंध में अभियोजन के मामले के अनुरूप होना चाहिए। ऐसे साक्षी के कथन में किसी प्रकार का अस्थिरता या विरोधाभास नहीं होना चाहिए। साक्षी को किसी भी प्रकार की, चाहे कितनी भी लंबी एवं कठोर जिरह क्यों न हो, उसका सामना करने में सक्षम होना चाहिए तथा किसी भी परिस्थिति में घटना के तथ्य, उसमें सम्मिलित व्यक्तियों तथा घटनाक्रम के संबंध में कोई संदेह उत्पन्न नहीं होना चाहिए। ऐसा कथन अन्य सहायक सामग्री जैसे कि की गई बरामदगी, प्रयुक्त हथियार, अपराध करने की विधि, वैज्ञानिक साक्ष्य एवं विशेषज्ञ की राय के साथ प्रत्येक पहलू में सहसंबद्ध होना चाहिए। उक्त कथन अन्य प्रत्येक साक्षी के कथन से भी निरंतर रूप से मेल खाना चाहिए। यह भी कहा जा सकता है कि यह उस कसौटी के समान होना चाहिए जो परिस्थितिजन्य साक्ष्य के मामलों में लागू

---

35 (2012) 8 एससीसी 21 [दो न्यायाधीशों की पीठ]

होती है, जहाँ परिस्थितियों की श्रृंखला में कोई भी कड़ी अनुपस्थित नहीं होनी चाहिए, ताकि अभियुक्त को आरोपित अपराध का दोषी ठहराया जा सके। केवल तब, जब ऐसे साक्षी का कथन उपर्युक्त कसौटियों तथा अन्य समान परीक्षणों पर खरा उतरता है, उसे 'उत्कृष्ट साक्षी' कहा जा सकता है, जिसका कथन न्यायालय द्वारा बिना किसी पुष्टिकरण के स्वीकार किया जा सके और जिसके आधार पर दोषी को दंडित किया जा सके। अधिक स्पष्ट रूप से, अपराध के मूल पहलू पर ऐसे साक्षी का कथन अक्षुण्ण रहना चाहिए, जबकि अन्य सहायक सामग्री–जैसे मौखिक, दस्तावेजी एवं भौतिक साक्ष्य– महत्वपूर्ण बिंदुओं पर उसके कथन से मेल खाते हों, ताकि न्यायालय अन्य सहायक सामग्रियों का परीक्षण करते हुए मूल कथन पर भरोसा कर अभियुक्त को दोषी ठहरा सके।"

(जोर दिया गया)

इस न्यायालय द्वारा इस सिद्धांत का लाभपूर्वक उद्धरण **गणेशन बनाम राज्य**[36] में किया गया था। हाल ही में, इस सिद्धांत को **नरेश उर्फ नेहरू बनाम हरियाणा**[37] राज्य में पुनः दोहराया गया।

23. उपर्युक्त चर्चा से, उत्कृष्ट साक्षी के गुणों के निर्धारण के संदर्भ में, यह स्पष्ट होता है कि अभियोजन का कोई भी साक्षी इस मानक पर खरा नहीं उतरता है। अभिलेख से अनेक विरोधाभास एवं असंगतियाँ प्रकट हुई हैं, जिससे ऐसे साक्षी अविश्वसनीय एवं अवलंबनीय नहीं रह जाते हैं, ताकि उनके आधार पर अभियुक्त व्यक्तियों को अपराध करने का दोषी ठहराया जा सके।

24. परिस्थितिजन्य साक्ष्य के संबंध में, विचारण न्यायालय ने PW-1 से PW-5, PW-10, PW-13 तथा PW-15 के साक्ष्यों का परीक्षण किया है। हमने उपर्युक्त रूप से PW-1, PW-2, PW-3 एवं PW-4 के साथ PW-15 पर चर्चा की है। अब हम PWs10 एवं 13

---

36 (2020) 10 एस.सी.सी. 573 [3 न्यायाधीशों की पीठ]

37 आपराधिक अपील संख्या 1786/2023 [2 न्यायाधीशों की पीठ]

के साक्ष्यों पर स्वतंत्र रूप से विचार करते हैं। PW-5, यद्यपि परिस्थितिजन्य साक्षी के रूप में वर्गीकृत किया गया है, तथापि उसके साक्ष्य के अवलोकन से यह प्रतीत होता है कि वह एक प्रत्यक्षदर्शी साक्षी है।

24.1 PW-10 ने कहा कि व्यक्तियों के समूह को देखकर वह विभिन्न दिशाओं में भाग गया, जिसमें वह स्वयं थाधूरु की ओर भागा। वहाँ रहते हुए उसे यह जानकारी मिली कि उसके भाई (मृतक) को अनेक चोटें आई हैं। इस सूचना के आधार पर वह अस्पताल गया, जहाँ उसने कहा कि स्वयं मृतक ने उसे बताया कि “मंजनाथ और उसके गाँव के सहयोगियों ने उस पर हमला किया।” उसने यह भी कहा कि वह कभी उस स्थान पर नहीं गया जहाँ मृतक पड़ा हुआ था और न ही वह यह बता सका कि उसे उसके भाई की चोटों के संबंध में किसने सूचना दी। अतः उसका कथन श्रुतलेख (हियरसे) प्रकृति का है।

24.2 विचारण न्यायालय द्वारा जिन परिस्थितियों का उल्लेख किया गया है और जिन साक्ष्यों पर भरोसा किया गया है, उनके संबंध में हम पाते हैं कि वे सभी अभियुक्तों के दोष की ओर निर्णायक रूप से संकेत नहीं करते। अभिलेख पर उपलब्ध परिस्थितिजन्य साक्ष्य से निम्नलिखित निष्कर्ष हमारे मत का समर्थन करते हैं–PW-15 को छोड़कर, जिन साक्षियों पर भरोसा किया गया है, उनमें से किसी ने भी सभी अभियुक्त व्यक्तियों के नाम नहीं बताए; सामान्यतः 25 से 30 व्यक्तियों के समूह का उल्लेख किया गया है–ऐसा सामान्य वर्णन दोष सिद्ध करने के लिए पर्याप्त नहीं है। द्वितीयतः, शत्रुता का तथ्य, यद्यपि अनेक साक्षियों द्वारा बार-बार कहा गया है, अपने आप में अभियुक्तों पर मृतक की हत्या का दोष आरोपित नहीं कर सकता। इस दृष्टिकोण को इस तथ्य से भी समर्थन मिलता है कि मृतक के भाई और कुछ अभियुक्त व्यक्तियों के बीच हुए विवाद के परिणामस्वरूप दर्ज आपराधिक मामले में उन्हें दोषमुक्त कर दिया गया था, जैसा कि विचारण न्यायालय द्वारा उल्लेखित किया गया है।

24.3 यह सत्य है कि कुछ साक्षियों, जैसे PW-4, ने स्पष्ट रूप से कुछ अभियुक्तों के हाथों में विशिष्ट हथियार होने का उल्लेख किया है। एक पृथक तथ्य के रूप में, इसे अभियुक्त द्वारा किए गए किसी विशेष कृत्य के संकेत के रूप में देखा जा सकता है,

जो मृतक की मृत्यु में सहायक हो। तथापि, PW-1 के चिकित्सकीय साक्ष्य इस संभावना को भी नकारते हैं। संबंधित साक्ष्यांश निम्नलिखित है–"

"मैं M.O. 3 पर डंडों को देखता हूँ। वे लगभग 4 फीट लंबाई और 3 इंच व्यास के हैं। यदि किसी व्यक्ति पर ऐसे डंडों से बार-बार प्रहार किया जाए, तो उसे अनेक खरोंचें, सूजनजन्य चोटें (कंट्यूजन) तथा चीर-फाड़ जैसी चोटें (लैसरेशन) लगेंगी।

जब मैंने मृतक बायरेगौड़ा का चिकित्सकीय परीक्षण किया, तो मैंने उसकी पीठ, छाती तथा पेट पर किसी भी प्रकार की खरोंच, चीर-फाड़ वाली चोट या सूजनजन्य चोट (कंट्यूजन) नहीं पाई। मैंने मृतक के शरीर पर कोई भी कटी हुई इंसीज़्ड चोट भी नहीं पाई।"

24.4 यद्यपि यह सत्य हो सकता है कि मृतक की मृत्यु उसे लगी चोटों के कारण हुई, तथापि PW-1 के उपर्युक्त उद्धृत साक्ष्य से यह स्पष्ट होता है कि उक्त चोटें उन हथियारों के परिणामस्वरूप नहीं हो सकती थीं, जिनका कथित रूप से अभियुक्त व्यक्तियों द्वारा उपयोग किया गया था तथा जो उनके कहने पर बरामद किए गए थे।

24.5 इन दोनों आधारों पर हम पाते हैं कि अभिलेख पर उपलब्ध परिस्थितिजन्य साक्ष्य अभियुक्त व्यक्तियों के दोष की ओर निर्णायक रूप से संकेत नहीं करते। हम यह भी पाते हैं कि प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य भी संदिग्ध हो जाते हैं, क्योंकि जिन हथियारों को अभियुक्त अपने पास लिए हुए थे तथा जो उनके कहने पर बाद में बरामद किए गए, वे मृतक के शरीर पर पाई गई चोटों से मेल नहीं खाते, जैसा कि PW-1 की जिरह से स्पष्ट होता है, जिसका उल्लेख ऊपर किया गया है।

25. अगला पहलू कथित हथियारों की बरामदगी का है, जिसके विवरण का हमने विचारण न्यायालय के निष्कर्षों पर चर्चा करते समय उल्लेख किया है। ऐसी बरामदगियों को विचारण न्यायालय ने इस आधार पर अस्वीकार कर दिया कि डंडे ऐसे स्थान से बरामद किए गए जो आम जनता के लिए सुलभ था तथा चॉपर और लोहे की छड़ें ऐसे घर से बरामद की गईं जहाँ अन्य व्यक्ति भी निवास करते थे, जिससे ऐसी बरामदगी की पवित्रता प्रभावित होती है और उसकी सत्यता पर संदेह उत्पन्न होता है।

26. इसके अतिरिक्त, कोई भी बरामदगी, जो भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 की आवश्यकताओं को संतुष्ट करने वाली हो, वह ऐसा तथ्य होना चाहिए जो अभिरक्षा में रखे गए व्यक्ति से प्राप्त सूचना के परिणामस्वरूप खोजा गया हो। इन शर्तों पर **पुलुकुरी कोटैया बनाम किंग एम्परर**[38] में प्रिवी काउंसिल द्वारा विचार किया गया है तथा इस स्थिति को **मोहम्मद इनायतुल्लाह बनाम महाराष्ट्र राज्य**[39] में इस न्यायालय द्वारा निम्नलिखित शब्दों में पुनः दोहराया गया है:-

"12... यह देखा जाएगा कि इस धारा को लागू करने के लिए पहली आवश्यक शर्त यह है कि किसी अपराध के अभियुक्त व्यक्ति से प्राप्त सूचना के परिणामस्वरूप किसी तथ्य, भले ही वह प्रासंगिक तथ्य हो, की खोज हो। दूसरी शर्त यह है कि ऐसे तथ्य की खोज के संबंध में साक्ष्य दिया जाना चाहिए। तीसरी शर्त यह है कि सूचना प्राप्त किए जाने के समय अभियुक्त पुलिस अभिरक्षा में होना चाहिए। अंतिम, किंतु अत्यंत महत्वपूर्ण शर्त यह है कि केवल "उतनी ही सूचना" ग्राह्य होगी जो सीधे उस खोजे गए तथ्य से संबंधित हो। शेष सूचना को अपवर्जित किया जाना चाहिए। "स्पष्ट रूप से" शब्द का अर्थ है "प्रत्यक्ष रूप से", "निस्संदेह", "कड़ाई से", "अविवादित रूप से"। इस शब्द का प्रयोग जानबूझकर किया गया है ताकि प्रमाणित की जाने वाली सूचना के क्षेत्र को सीमित और परिभाषित किया जा सके। "स्पष्ट रूप से उस खोजे गए तथ्य से संबंधित" वाक्यांश इस प्रावधान का मुख्य आधार है। यह वाक्यांश उस सूचना के उस भाग को संदर्भित करता है जो अभियुक्त द्वारा प्रदान की गई हो और जो खोज का प्रत्यक्ष एवं तात्कालिक कारण हो..."

(जोर दिया गया)

27. प्रथम दृष्टया, वर्तमान तथ्यों में उपर्युक्त तीनों शर्तें पूर्ण होती प्रतीत होती हैं। तथापि, विचारण न्यायालय ने यह माना कि किए गए बरामदगी या खोज या तो किसी सार्वजनिक स्थान से हुई थीं अथवा ऐसे स्थान से, जहाँ अन्य व्यक्तियों का भी निवास था; अतः उन पर निर्भर नहीं किया जा सकता। हम विचारण न्यायालय के इस दृष्टिकोण को सही पाते हैं।

---

38 1946 एस.सी.सी. ऑनलाइन पी.सी. 47

39 (1976) 1 एस.सी.सी. 828

27.1 यह न्यायालय ने, विभिन्न निर्णयों में, इस स्थिति को स्पष्ट किया है। उदाहरणार्थ, **जैकम खान बनाम उत्तर प्रदेश राज्य**[40] में यह अवलोकित किया गया था: -

> “कथित बरामदगियों में से एक उस कमरे से है जहाँ मृतका असगरी सोया करती थी। अन्य दो बरामदगियाँ खुले मैदान से हैं, जो मृतक शौकीन खान के घर के ठीक पीछे अर्थात् घटना स्थल पर स्थित है। इस प्रकार यह देखा जा सकता है कि बरामदगियाँ ऐसे स्थानों से की गई थीं, जो सभी के लिए सुलभ थे और इसलिए ऐसी बरामदगियों पर कोई भरोसा नहीं किया जा सकता।”

(जोर दिया गया)

27.2 साथ ही, **निखिल चंद्र मंडल बनाम पश्चिम बंगाल राज्य**[41] में न्यायालय ने यह कहा:-

“20. विचारण न्यायालय ने कपड़ों और हथियार की बरामदगी पर दो आधारों पर विश्वास नहीं किया। प्रथम, कि भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 27 के अंतर्गत अपेक्षित अभियुक्त का कोई स्मरण-पत्र कथन नहीं था; और द्वितीय, कि चाकू की बरामदगी ऐसे खुले स्थान से हुई थी, जो सभी के लिए सुलभ था। हम पाते हैं कि विचारण न्यायालय द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण विधि के अनुरूप था। तथापि, यह परिस्थिति, जिसे हमारे मत में प्रयुक्त नहीं किया जाना चाहिए था, उच्च न्यायालय द्वारा अतिरिक्त-न्यायिक स्वीकारोक्ति के समर्थन हेतु उपयोग में लाई गई है।”

(जोर दिया गया)

28. अभिलेख से परिलक्षित होता है, और विशेषतः PW-15 की गवाही से यह स्पष्ट है कि बरामदगियाँ (उदाहरणार्थ A10 द्वारा दर्शाई गई लाठी) यूकेलिप्टस की लाठी थी, जो यूकेलिप्टस के बागान से प्राप्त हुई, जो निर्विवाद रूप से एक सार्वजनिक स्थान है और एक सप्ताह बाद पाई गई। उसी दिन कथित रूप से आधा किलोमीटर दूर से प्राप्त दूसरी और तीसरी लाठियाँ झाड़ियों के पास से मिलीं, जो पुनः सार्वजनिक पहुंच वाला स्थान था। A6 और A7 के कहने पर बरामद की गई दो अन्य लाठियाँ भी सार्वजनिक स्थानों से ही प्राप्त हुईं। A1 और A2 के घर से प्रस्तुत की गई लोहे की जंजीर भी इस संभावना से मुक्त नहीं है कि उनके घर के अन्य निवासियों में से कोई इसके लिए जिम्मेदार न हो। हम इस तथ्य की भी अनदेखी

---

40 (2021) 13 एससीसी 716

41 (2023) 6 एससीसी 605

नहीं कर सकते कि लाठियाँ, चाहे बाँस की हों या अन्य प्रकार की, ग्राम जीवन में सामान्यतः पाई जाने वाली वस्तुएँ हैं, और इसलिए ऐसे साधारण वस्तुएँ, वह भी सार्वजनिक पहुंच वाले स्थानों से बरामद होने पर, अभियुक्तों पर दोषारोपण का आधार नहीं बन सकतीं।

<u>निष्कर्ष</u>

29. अतः, हमारे निष्कर्ष इस प्रकार हैं:

29.1 मृत्युपूर्व कथन, यद्यपि निस्संदेह एक ठोस साक्ष्य का भाग है जिस पर भरोसा किया जा सकता है, तथापि वर्तमान तथ्यों में यह निष्प्रभावी हो जाता है, क्योंकि जिस व्यक्ति ने उक्त कथन लिपिबद्ध किया था, उसका परीक्षण नहीं किया गया, और न ही पुलिस अधिकारी (PW19) ने उक्त दस्तावेज़ पर यह उल्लेख किया कि कथन किसने दर्ज किया। यह भी स्पष्ट नहीं है कि मृतक के किन रिश्तेदारों के समक्ष यह कथन दर्ज किया गया था।

29.2 अभिलेख पर उपलब्ध परिस्थितिजन्य साक्ष्य, उपर्युक्त कारणों से, अभियुक्त व्यक्तियों के दोष की परिकल्पना की ओर संकेत नहीं करता।

29.3 विचारण न्यायालय द्वारा उल्लिखित प्रत्यक्षदर्शी गवाह–PW 2, 3, 15–में से कोई भी किसी विशेष अभियुक्त को कोई विशिष्ट भूमिका आरोपित करने में सफल नहीं हुआ है; और यही स्थिति A-1 से A-5 तथा A-7 के संबंध में भी है, जिनकी बरी किए जाने की स्थिति को उच्च न्यायालय द्वारा पलट दिया गया था।

30. हमारे विचारित मत में, विचारण न्यायालय द्वारा लिया गया दृष्टिकोण एक संभावित दृष्टिकोण था और साक्ष्य के सही एवं पूर्ण मूल्यांकन तथा विधि के अनुप्रयोग में कोई त्रुटि न होने के कारण, उच्च न्यायालय को बिना कोई ठोस कारण बताए ऐसे निष्कर्षों में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए था।

31. उपर्युक्त कारणों से, हमारे समक्ष आपत्ति किए गए आपराधिक अपील संख्या 1795/2004 में दिनांक 21 सितम्बर 2010 का निर्णय निरस्त किया जाता है। तदनुसार, अपील स्वीकार की जाती है।

32. उपर्युक्त प्रकार से अपीलों को स्वीकार करते हुए, हम यह टिप्पणी करने के लिए विवश हैं कि दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 378 के अंतर्गत आपराधिक अपील में उच्च न्यायालय ने आरोपों की गंभीरता का पूर्ण रूप से मूल्यांकन नहीं किया। यह सिद्धांत कि अपीलीय न्यायालय को बरी किए जाने के निर्णय को पलटते समय सावधानी बरतनी चाहिए, किसी पुनरुक्ति का विषय नहीं है। बार-बार यह कहा गया है कि बरी किए जाने के निर्णय को केवल अत्यंत ठोस कारणों की उपस्थिति में ही पलटा जाएगा।[42] इसके अतिरिक्त, प्रिवी काउंसिल[43] के समय से ही यह माना गया है कि यदि विचारण न्यायालय द्वारा बरी किया जाता है, तो अभियुक्त के पक्ष में निर्दोषता की धारणा और भी सुदृढ़ हो जाती है।[44] हम पाते हैं कि उच्च न्यायालय ने अपीलों का निर्णय करते समय उक्त सिद्धांतों का पालन नहीं किया। इसके विपरीत, अपीलकर्ताओं की दोषसिद्धि को पुनः स्थापित करने हेतु सतही कारण दर्ज किए गए हैं। विचारण न्यायालय के अवलोकनों तथा निर्दोषता की सुदृढ़ धारणा के सिद्धांत को संक्षेप में ही नज़रअंदाज़ कर दिया गया। यह विधि के अनुरूप नहीं कहा जा सकता।

33. परिणामस्वरूप, अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश-सह-पीठासीन अधिकारी, फास्ट ट्रैक न्यायालय-II, कोलार द्वारा सत्र वाद संख्या 162/1999 में दिनांक 25 सितम्बर 2004 को पारित निर्णय एवं आदेश द्वारा दिए गए बरी किए जाने के आदेश को पुनः स्थापित किया जाता है। उच्च न्यायालय द्वारा प्रदान किया गया दोषसिद्धि एवं दंड का निर्णय निरस्त किया जाता है।

34. चूँकि भारतीय दंड संहिता की धारा 304 भाग-II के अंतर्गत उच्च न्यायालय द्वारा दी गई सजा 4 वर्ष की थी, और समर्पण से छूट के आवेदन को इस न्यायालय द्वारा दिनांक 13 दिसम्बर 2010 के आदेश द्वारा अस्वीकृत कर दिया गया था, अतः ऐसा प्रतीत होता है कि अपीलकर्ताओं ने उन्हें दी गई सजा पहले ही भोग ली है।

35. तथापि, यह निर्देशित किया जाता है कि विवादित निर्णय के परिणामस्वरूप प्रत्येक अभियुक्त द्वारा देय किया गया जुर्माना उन्हें वापस किया जाए। फलस्वरूप, जमानत बंधपत्र, यदि प्रभाव में हों, निरस्त माने जाएंगे। तदनुसार, अपील स्वीकार की जाती है।

---

42 तुलसीराम कानू बनाम राज्य, एआईआर 1954 एससी 1

43 श्यो स्वरूप बनाम किंग एम्परर, एआईआर 1934 पीसी 227(2)

44 घुरेय लाल बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, (2008) 10 एससीसी 450

35. उपर्युक्त के आलोक में, यदि कोई अंतर्वर्ती आवेदन लंबित हों, तो वे निस्तारित माने जाएंगे।

शीर्ष टिप्पणियाँ दिव्या पांडेय द्वारा तैयार की गईं : अपील स्वीकार की गई।

यह अनुवाद संजय नारायण, पैनल अनुवादक द्वारा किया गया है|